जुलाई 2006
Rs. 13 /-
चन्दामामा
Vapa
६० वर्षों से ज्ञान-विज्ञान तथा मनोविनोद को प्रकीर्ण करनेवाली विशिष्ट पत्रिका

चन्दामामा का ६० वें वर्ष में प्रवेश
1947
1948
1949
1952
1954
1955
1956
1972
1975
1976
1978
1984
2003
2004
2006
१९४७ - तेलुगु और तमिल
१९४८ - कन्नड
१९४९ - हिन्दी
१९५२ - मलयालम तथा मराठी
१९५४ - गुजराती
१९५५ - अंग्रेजी
१९५६ - उड़िया तथा सिन्धी
१९७२ - बंगाली
१९७५ - गुरुमुखी
१९७६ - असमी
१९७८ - सिंहल
१९८४ - संस्कृत
२००३ - अंग्रेजी- तमिल द्विभाषी सिंगापुर के लिए तथा अंग्रेजी-तेलुगु, तमिल, हिन्दी, गुजराती द्विभाषी उत्तर अमेरिका के लिए
२००४- संथाली – आदिवासी भाषा में प्रथम बाल-पत्रिका
वर्ष २००३ में जूनियर चन्दामामा का प्रकाशन आरम्भ किया गया। ब्रेललिपि में चन्दामामा १९८१ से १९९७ तक प्रकाशित किया गया। वर्ष २००५ में इसे पुनर्जीवित किया गया। कुछ संस्करण अल्पकालीन प्रकाशन के बाद बन्द हो गये, किन्तु प्रयास निरन्तर चल रहा है। क्या यह उपलब्धि विश्व भर में कहीं भी अद्वितीय नहीं है?
चन्दामामा: भाषाएँ अनेक, परम्परा एक

बाल विशेषांक (नवम्बर'०६)

तुम सबने अप्रैल २००६ अंक में घोषणा अवश्य देखी होगी

पुरस्कार राशि: ***कहानी:*** प्रत्येक प्रकाशित कहानी पर ५०० रु.

चित्रकला : प्रथम पुरस्कार ५०० रु; द्वितीय पुरस्कार ४०० रु.

तीन सान्त्वना पुरस्कार-प्रत्येक २०० रु.

- तुम्हारी कहानी उन १२ भाषाओं में से किसी एक में हो सकती है, जिनमें चन्दामामा पत्रिका प्रकाशित होती है।
- चित्रकला का सारांश भी इनमें से किसी एक भाषा में हो सकती है।
- तुम्हारी प्रविष्टि निम्नलिखित कूप न के साथ आनी चाहिये। फोट ो कापी स्वीकृत नहीं की जायेगी।

मैं निम्नलिखित प्रविष्टि प्रेषित करना चाहता/चाहती हूँ:

कहानियाँ : *शीर्षक :* १. ______________
२. ______________

चित्रकला : विषय: १. ______________
२. ______________

नाम ______________

जन्मदिन ________ कक्षा ________ विद्यालय ________

____

निवास पता ______________

______________ पिन कोड ________

प्रमाणित करता/ करती हूँ कि ये प्रविष्टियाँ मे री/मेरे पुत्री/पुत्र की कि सी की मदद के बिना स्वरचित मौलिक कृतियाँ हैं।

अभिभावक **प्रतियोगी**

संस्थापक

बी. नागि रेड्डी और चक्रपाणि

एक और मील का पत्थर

भारतीय परम्परा में, जीवनकाल का ६० वाँ वर्ष सौभाग्यशाली होता है- जिसे षष्ठीअब्दपूर्ति के रूप में मनाया जाता है। जुलाई १९४७ में आरम्भ किया गया *चन्दामामा* इस जुलाई में अपने प्रकाशन के ६० वें वर्ष में प्रवेश कर रहा है। यह, निश्चित ही, एक पत्रिका के लिए और हम सब के लिए, एक युगान्तरकारी घटना है- जो यह जानते हैं कि भारत में, संभवत एशिया में भी, शायद ही कोई अन्य बाल पत्रिका छः दशकों के दीर्घ अन्तराल तक जीवन्त रही हो। कहने की आवश्यकता नहीं है कि तरुण पाठकों की पीढ़ी के प्यार ने ही इसके अस्तित्व को बनाये रखा है।

इसके अतिरिक्त, इसके पूरे जीवनकाल में जिस चीज ने इसे बल प्रदान किया है, हमारे अनुभवी और वरिष्ठ पाठकों के अनुसार, वह है अपने आदर्शों के प्रति इसकी पूर्ण निष्ठाः भारत की विरासत और पुरातन अतीत को बच्चों के और अधिक निकट पहुँचाना और उन्हें इस महान देश के योग्य नागरिक बनाने के लिए उनमें उत्कृष्ट मानव मूल्यों के प्रति प्रेरणा भरना।

इस स्मरणीय अवसर पर हम अपने संस्थापकों, श्री बी. नागि रेड्डी तथा श्री चक्रपाणि को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हैं, जिन्होंने भारत की स्वाधीनता के उपरान्त के बच्चों को, उनके आनन्द और ज्ञानवर्धन के लिए, एक खूबसूरत पत्रिका का उपहार देने का सपना देखा था। उनके उत्तराधिकारियों ने पत्रिका का उच्च स्तर बनाये रखने में कोई कसर नहीं छोड़ा है। इस कार्य में, हमें हजारों ग्राहकों, आठ से अस्सी तक के लाखों पाठकों, अभिभावकों, अध्यापकों, विज्ञापकों, प्रतिनिधियों तथा वितरकों का दृढ़प्रतिज्ञ समर्थन मिला है। उन सबको हार्दिक कृतज्ञता के साथ हम धन्यवाद देते हैं।

हमारे मनोवांछित आदर्श और पाठकों की उदात्त अभीप्साएँ जिन्दाबाद रहें।

सम्पादक : विश्वम

Visit us at : http://www.chandamama.org

चन्दामामा

सम्पुट-५७ जुलाई २००६ सञ्चिका - ७

अंतरंग

विशेष आकर्षण

SUBSCRIPTION

For USA and Canada
Single copy $2
Annual subscription $20

Remittances in favour of Chandmama India Ltd.
to
Subscription Division
CHANDAMAMA INDIA LIMITED
No. 82, Defence Officers Colony
Ekkatuthangal,
Chennai - 600 097
E-mail :
subscription@chandamama.org

चन्दामामा प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता-४ (मई २००६) की विजेता को बधाई!

गीता कुमारी
C/o. श्री मनोरंजन प्रसाद श्रीवास्तव
तरी मुहल्ला, पोस्ट : आरा
जिला : भोजपुर
(बिहार)

© The stories, articles and designs contained in this issue are the exclusive property of the Publishers. Copying or adapting them in any manner/ medium will be dealt with according to law.

पाठकों का पन्ना

इन्दौर से बाल सेवक

मैं सात वर्ष की आयु से ही चन्दामामा का उत्सुक पाठक रहा हूँ। आप को यह जानकर आश्चर्य होगा कि मेरे नगर इन्दौर में चन्दामामा के बहुत से नियमित पाठक हैं। हमें पिछले २८ वर्षों के अंकों के विशद संग्रह पर गर्व का अनुभव होता है। यद्यपि प्रकाशन में अनेक बाल पत्रिकाएँ हैं, फिर भी, चन्दामामा उन सबसे आगे है जिसका कारण यह है कि परम्परागत मूल्यों को उजागर करनेवाली कहानियों के माध्यम से पाठकों के मन पर यह चिरस्थायी प्रभाव छोड़ जाता है। हम पूरी निष्ठा से विश्वास करते हैं कि: १. चन्दामामा वेदों, पुराणों, उपनिषदों पर आधारित कथाओं के कारण अद्वितीय पत्रिका है। २. नीति कथाओं, लोक कथाओं तथा साहसिकतापूर्ण कथाओं के कारण चन्दामामा एक विलक्षण पत्रिका है। ३. शंकर तथा चित्रा जैसे प्रतिभाशाली कलाकारों के श्रेष्ठ चित्रों के कारण यह अनोखी है। इसके विषय में मैं कितना भी लिखूँ, फिर भी, चन्दामामा की सारी विशेषताओं का बखान नहीं कर सकता।

नीलमणि भाटिया, नई दिल्ली

चन्दामामा ने प्राचीन और आधुनिक युग के बीच सन्तुलन बनाये रखने के कठिन कार्य को सफलतापूर्वक निभाया है। यह सचमुच प्रोत्साहन की बात है कि चन्दामामा हमारे बच्चों के सामने एक पूर्ण उपहार के रूप में थाल में परोसा जा रहा है। हमारी कामना है कि आसमान में चमकते अपने प्रतिरूप के समान ही चन्दामामा भी शाश्वत बना रहे।

मिलिन्द सामन्त, सिन्धुदुर्ग

चन्दामामा के अंकों की पठन सामग्री रोचक होती है। इसके चित्र पाठ्य सामग्री के पूरक और अति रमणीय होते हैं। ग्रामीण जीवन अब बड़ी तेजी से बदल रहा है। लेकिन चन्दामामा/चान्दोबा के चित्रों ने पुरानी जीवन-शैली को जीवन्त और आकर्षक बनाये रखा है। मूल्यों पर आधारित कहानियाँ, बेताल कथाएँ और सामान्य जानकारियाँ पत्रिका को बहुमुखी बनाती हैं। निर्मल मनोरंजन और ज्ञान के विकास ने इसे एक उत्कृष्ट पत्रिका बना दिया है।

कार्तिक भूषण, उडुपी

मैं आप का सच्चा चन्दामामा-फैन हूँ। आपकी पत्रिका इतनी अच्छी है कि मैं सभी अंकों को नियमित रूप से पढ़ता हूँ।

युवराज का अक्षराभ्यास

सूर्यसेन विंध्यगिरि राज्य का राजा था। वह बड़ा ही धार्मिक था। सदा लोगों का क्षेम ही सोचता था। अतः खज़ाने का अधिक भाग उनके कल्याण के लिए खर्च करता था। एक बार इस कारण से खज़ाना खाली हो गया। सूर्यसेन नहीं चाहता था कि इसके लिए जनता से अधिक कर बसूल किये जाएँ। वह सोच में पड़ गया कि राज्य की आमदनी कैसे बढ़ायी जाए।

विदर्भ और वैशाली, विंध्यगिरि के पड़ोसी राज्य थे। विदर्भ के राजा चंद्रकांत और वैशाली के राजा महीधर की दृष्टि विंध्यगिरि की आर्थिक व सैनिक बल की बलहीनता पर पड़ी। वे दोनों अपने-अपने राज्य को बिस्तृत करने की तीव्र आकांक्षा रखते थे। एक-दूसरे को निगल जाने के लिए वे मौक़े की ताक में रहते थे। वे पहले विंध्यगिरि पर आक्रमण करके उसे अपने राज्य में सम्मिलित कर लेना चाहते थे, फिर एक-दूसरे के राज्य को हड़पने का षड्यंत्र रचना चाहते थे।

सूर्यसेन को यह समाचार गुप्तचरों के द्वारा मालूम हुआ। सूर्यसेन मंजा हुआ एक राजनीतिज्ञ भी था। वह युद्ध निवारण के लिए मार्गों का अन्वेषण करने लगा। इतने में उसके हाथ एक सुअवसर आया।। जयंत सूर्यसेन का चार साल का इकलौता पुत्र था। उसके अक्षराभ्यास के लिए राजपुरोहित ने एक शुभ मुहूर्त निश्चित किया। राजा इस सुअवसर को अपने हाथ से जाने देना नहीं चाहता था। उसने अपने शत्रु राजा चंद्रकांत और महीधर को इस अवसर पर निमंत्रित करने का निश्चय किया। दोस्ती का हाथ बढ़ाने के उद्देश्य से उसने उन दोनों को निमंत्रण-पत्र भेजा।

दोनों शत्रु राजा भी इस मौक़े की ताक़ में थे। वे चाहते थे कि कोई न कोई बहाना बनाकर सूर्यसेन से झगड़ा मोल लें और युद्ध के लिए ललकारें। यह उनकी चाल थी। दोनों युवराज

नंद गोपाल

जयंत के अक्षराभ्यास के दिन उपस्थित हुए। सूर्यसेन ने उन दोनों अतिथियों का आदर-सत्कार किया। स्नेहपूर्ण वातावरण में उस दिन का भोज समाप्त हुआ।

इसके बाद विदर्भ के राजा चंद्रकांत ने एक स्वर्ण पटिया देते हुए सूर्यसेन से कहा, ''अक्षराभ्यास के उत्सव के समय इसका उपयोग कीजिये।''

वैशाली के राजा महीधर ने भी हाथी के दंत से तैयार की गयी सुंदर पटिया देते हुए कहा, ''सरस्वती के मंदिर में पूजाएँ करके लायी गयी पटिया है यह। युवराज से, इस पटिया पर अक्षर लिखवायेंगे तो वह बड़ा विद्यावान् होगा।''

अब सूर्यसेन की स्थिति बड़ी नाजुक हो गयी। फिर भी मुस्कुराते हुए उसने कहा, ''आप दोनों को मेरी हार्दिक कृतज्ञता।''

चंद्रकांत और महीधर गंभीरता के साथ सोचते हुए अतिथि गृह पहुँचे।

चंद्रकांत मन ही मन चाह रहा था कि सूर्यसेन अपने पुत्र के अक्षराभ्यास का प्रारंभ महीधर की समर्पित पटिया पर कराये। इसे वह अपना अपमान घोषित करेगा और इस बहाने की आड़ में सूर्यसेन को युद्ध के लिए ललकारेगा। महीधर की भी यही सोच थी। दोनों का उद्देश्य सूर्यसेन से झगड़ा मोल लेना था।

पटियों के विषय में, सूर्यसेन ने उन दोनों के मनोभावों को भांप लिया। परंतु उसकी समझ में नहीं आ रहा था कि ऐसी स्थिति में क्य ा किया जाए। दूसरे दिन युवराज के अक्षराभ्यास का शुभ मुहूर्त आ ही गया । राज्य की परम्परा के अनुसार जनता के आशीर्वाद के लिए सुंदर रूप से सजाये गये शाही हाथी पर आसीन होकर सूर्यसेन व युवराज जयंत निकले। राजमार्ग के दोनों ओर लोग क़तार में खड़े थे। वे पुष्प बरसाते हुए युवराज को आशीर्वाद देने लगे।

उस समय महाराज की दृष्टि अचानक एक बालक पर पड़ी। उसकी उम्र पाँच साल की होगी। उसके हाथ में पटिया थी और युवराज की ओर इशारा करते हुए वह रोये जा रहा था। उसकी माँ सांत्वना देने की भरसक कोशिश कर रही थी।

सूर्यसेन ने महावत से हाथी को रोकने के लिए कहा और उस बालक की माँ के पास गया। राजा को देखते ही वह डरती हुई बोली, ''क्षमा कीजिये,

महाराज। इस शुभ समय पर इसका रोना अपराध है, परंतु विवश हूँ,'' कहते हुए उसने हाथ जोड़े।

''डरो मत। बताना कि यह बालक क्यों रो रहा है?'' महाराज ने पूछा। ''इसने मुझसे पूछा कि महाराज और युवराज हाथी पर सवार होकर क्यों आ रहे हैं। मैंने बताया कि युवराज के अक्षराभ्यास का शुभ मुहूर्त है। लोगों से आशीर्वाद लेने आ रहे हैं। यह सुन इसने जिद पकड ली कि अपनी पटिया युवराज को देकर ही रहूँगा।''

यह सुनकर सूर्यसेन अति प्रसन्न हुआ। मन ही मन सोचा, 'एक नादान बालक बड़े ही प्रेम से अपनी पटिया युवराज को देना चाहता है। यह तो बहुत बड़ी बात है। प्रेम की भेंट से बढ़कर क्या और भेंट हो सकती है?' फिर उसने प्रेमपूर्वक बालक का हाथ पकड़ा और उससे पूछा, ''तुम्हारा नाम क्या है?''

बालक ने आँसू पोंछते हुए कहा, ''सुधाम।''

''सुनो सुधाम, रोना बंद कर दो और हँसते हुए अपनी यह पटिया युवराज को दे दो।'' सूर्यसेन ने कहा।

सुधाम ने बड़ी ही प्रसन्नता के साथ पटिया युवराज को दी। राजा ने सुधाम की माँ से कहा, ''राजभवन में रात को भोज है। तुम दोनों अवश्य आओ।'' वहाँ उन्हें ले आने की जिम्मेदारी एक सैनिक को सौंपी।

जुलूस की समाप्ति के बाद, राजभवन में युवराज के अक्षराभ्यास का कार्यक्रम शुरू हुआ। राजपुरोहित ने, युवराज से अक्षर लिखवाने के लिए
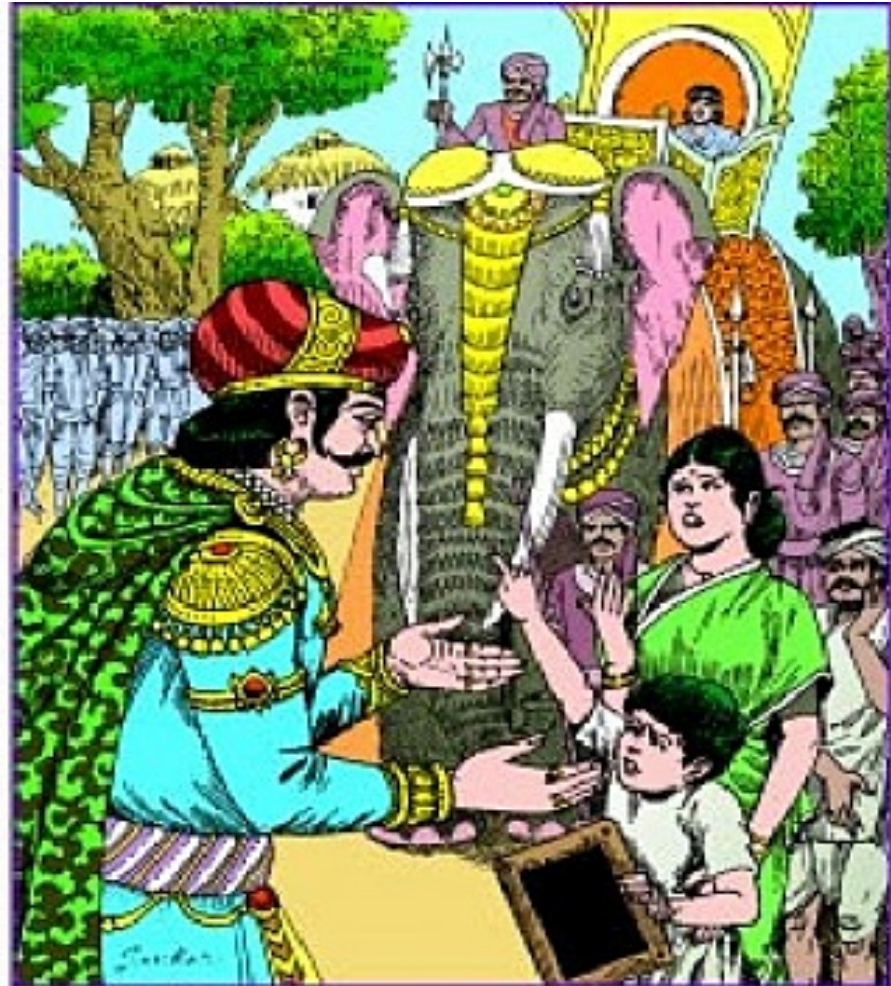
पटिया माँगी। चंद्रकांत और महीधर इस बात को जानने के लिये बड़े ही उत्सुक थे कि उनमें से किसकी पटिया युवराज को दी जायेगी।

तब, सूर्यसेन उठा, राजाओं की ओर ध्यान से देखा और कहा, ''युवराज के अक्षराभ्यास के उत्सव में भाग लेने विशेष अतिथि बनकर राजा चंद्रकांत और राजा महीधर यहाँ पधारे। मेरे इन दोनों मित्रों ने, युवराज की विद्याभिवृद्धि की इच्छा प्रकट करते हुए एक ने स्वर्ण पटिया दी और दूसरे ने, सरस्वती के मंदिर में पूजी गयी हाथी के दंत की पटिया दी। उन्हें मेरा हृदयपूर्वक धन्यवाद। राज्य की परम्परा के अनुसार जनता के आशीर्वाद पाने के लिए जब हम निकले, तब सुधाम नामक एक दरिद्र बालक अपनी एकमात्र पटिया युवराज को देने के लिए लालायित था।

मैंने खुद जाकर उसे स्वीकार की। अब यहाँ तीन पटियें हैं। प्रजा की इच्छा के अनुसार ही चलना हमारी परिपाटी और परम्परा है। इसलिए, आप ही बताइये कि इनमें से किस पटिया पर युवराज के अक्षराभ्यास का प्रारंभ हो।''

दोनों राजा कुछ कहने ही वाले थे कि इतने में सभी सभिकों में से एक ने कहा, ''हमारे राजा धर्मप्रभु हैं। राजा और रंक दोनों उनके लिए समान हैं। नादान सुधाम ने जो पटिया प्रेमपूर्वक दी, उसी से युवराज के अक्षराभ्यास का प्रारंभ होना चाहिये।'' कहते हुए सबने हर्षध्वनि की।

राजा सूर्यसेन ने राहत की सांस ली। वे जान गये थे कि यदि वे किसी एक राजा की पटिया का प्रयोग करेंगे तो दूसरे राजा से शत्रुता मोल लेनी होगी। उन्हें यह भी भय था कि सुधाम की पटिया पर युवराज का अक्षराभ्यास करने पर शायद दोनों राजा नाराज हो जायें। पर प्रजा का पूरा सहयोग मिलेगा, यही एक मात्र भरोसा था।

युवराज जयंत का अक्षराभ्यास सुधाम की पटिया पर ही हुआ। चंद्रकांत और महीधर ने स्वयं देख लिया कि राजा सूर्यसेन अपनी सामान्य प्रजा को भी कितना चाहते हैं और प्रजा भी उन्हें कितना मानती है। इस अनन्य प्रेम व आदर को देखकर वे चकित रह गये। दोनों ने अब भली-भांति समझ लिया कि राजा को केवल आर्थिक व सैनिक बल ही नहीं बल्कि प्रजा का प्रेम व आदर भी अवश्य चाहिये। चूँकि सूर्यसेन अपनी प्रजा को सगी संतान मानते हैं, इसलिए प्रजा भी उन्हें उसी दृष्टि से देखती है, उनसे प्रेम और आदर विपुल राशि में प्राप्त होते हैं। दोनों राजाओं को लगा कि राजा के प्रति शत्रु भाव धर्म विरुद्ध है, इसलिए दोनों ने मैत्री का हाथ बढ़ाया।

इसके बाद, सूर्य सेन ने, विदर्भ-वैशाली राजाओं का आदर-सत्कार बड़े पैमाने पर किया और मूल्यवान भेंट देकर उन्हें विदा किया।

सूर्यसेन को लगा था कि यह समस्या बड़ी ही गंभीर होने जा रही है और उसके विपरीत परिणाम भी होंगे, पर सुधाम के कारण समस्या आसानी से सुलझ गयी। उसने युवराज के साथ ही सुधाम के भी विद्याभ्यास का प्रबंध किया।
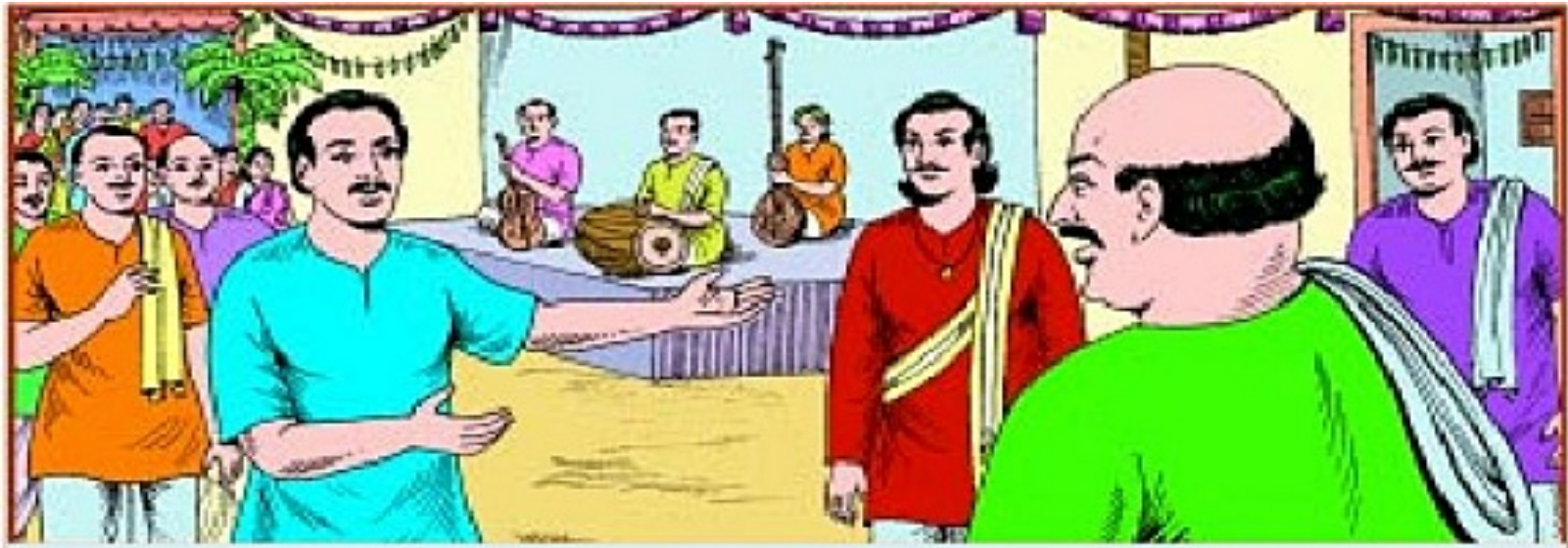
कामेश की संगीत सभा

रामेश और कामेश पड़ोसी हैं। गाँव के लोगों का कहना है कि रामेश मिलनसार है, उसके बोलने का तरीक़ा बड़ा ही मीठा होता है और उसकी वाक् पटुता सराहनीय है। किन्तु कामेश का स्वभाव इसके बिल्कुल विपरीत है। जब कभी भी मौक़ा मिलता है, वह रामेश की खिल्ली उड़ाता है, उसपर ताने कसता है और अपने को बड़ा साबित करने की व्यर्थ कोशिश करता रहता है।

एक बार रामेश और कामेश को, बग़ल के गाँव के एक संपन्न भूस्वामी से, उसके बड़े बेटे के बिबाह का निमंत्रण-पत्र मिला। दोनों गये।शाम तक विवाह का कार्यक्रम पूरा हुआ। रात को भोजन के बाद संगीत सभा आयोजित हुई।

रात के आठ बज गये, पर वह संगीत विद्वान नहीं आया, जिसे संगीत सभा में गाना था।

दुलहे के बाप ने इसके लिए अतिथियों से क्षमा माँगी और कहा, ''बजानेवाले सब तैयार बैठे हैं परंतु गायक अब तक आये ही नहीं।''

दुलहे के रिश्तेदारों में से दो-तीन आदमियों ने दुलहे के पिता से कहा, ''आप चिंता मत कीजिये। यह सौभाग्य की बात है कि यहाँ रामेश और कामेश उपस्थित हैं। हमनेसुना कि इन दोनों में से कामेश बड़े ही अच्छे गायक हैं। वे क्यों न गाना गायें?''

अतिथियों ने ज़ोर दिया तो कामेश को गाना ही पड़ा। गाते हुए कामेश को लगा कि उसका स्वर मधुर है और अतिथि इसका मज़ा ले रहे हैं। कुछ लोगों ने उसकी तारीफ़ भी की। पर, रामेश चुप रहा। इस पर कामेश नाराज़ हो उठा।

गाँव लौटने के बाद कामेश अपने संगीत ज्ञान की खुद तारीफ़ करने लगा तो तीन प्रमुख व्यक्ति आगे आये, जिन्होंने अनेक संगीत सभाओं में बाजे बजाये थे और नाम कमाया था।

उनके सहयोग से उसी रात को कामेश की संगीत सभा का प्रबंध हुआ। गाना शुरू करते ही, लोगों को यह जानने में देर नहीं लगी कि कामेश

को संगीत का थोड़ा भी ज्ञान नहीं है और वह ज़ोर-ज़ोर से चिल्लाना ही संगीत समझता है। वे मन ही मन हँसते रहे।

संगीत सभा जब खत्म हुई, कामेश ने कहा, ''सुप्रसिद्ध संगीतज्ञ त्यागराज को भी मैंने भुला दिया है। मेरे गंधर्व गान पर कृपया अपने-अपने अभिप्राय व्यक्त कीजिये।''

कुछ लोगों ने विवश होकर उसकी झूठी तारीफ़ की। उनमें से वे लोग भी थे, जिन्होंने बाजे बजाये।

परंतु, रामेश को चुप पाकर कामेश ने कहा, ''तुम्हारी चुप्पी शोभा नहीं देती। मैं चाहता हूँ कि इस संगीत सभा पर तुम अपनी राय दो।''

कामेश समझता था कि अगर उसकी तारीफ़ रामेश नहीं करे तो गाँववाले उसे ईर्ष्यालु मानेंगे और उसकी भर्त्सना करेंगे। किन्तु रामेश ने कहा, ''सिर्फ मैं ही नहीं, यहाँ बहुत से ऐसे लोग हैं, जिन्होंने कुछ नहीं कहा। उनकी राय ही मेरी भी राय है।''

रामेश की बातों में जो व्यंग्य छिपा हुआ था, उसे बहुत लोगों ने समझ लिया, इसलिए वे हँसते रहे। कामेश नाराज़ हो उठा और जिद पकडी कि रामेश को अपनी राय बतानी ही पडेगी। रामेश ने उन तीनों वाद्य बजानेवालों की प्रशंसा की और चुप रह गया।

''तुमने तो मेरे गाने के विषय में कुछ भी नहीं कहा,'' कामेश ने पूछा।

''जो बाजे बजा रहे थे, उन तीनों ने तुम्हारे गाने की प्रशंसा की। पर उनमें से किसी ने भी अपने बारे में एक भी शब्द नहीं कहा। इसका मतलब हुआ कि आत्म प्रशंसा करने में तुम्हारी प्रतिभा असाधारण है और वे तीनों उस प्रतिभा से वंचित हैं। जो काम वे नहीं कर सकते, वह काम मैं कर रहा हूँ। मैं उन्हीं की सहायता करता हूँ,जो कुछ कर सकने की स्थिति में नहीं होते। तुम जैसे योग्यों की सहायता करने की मेरी आदत नहीं है। इसीलिए मैंने तुम्हारी तारीफ़ नहीं की।''

यों कामेश, रामेश के हाथों एक और बार मात खा गया।
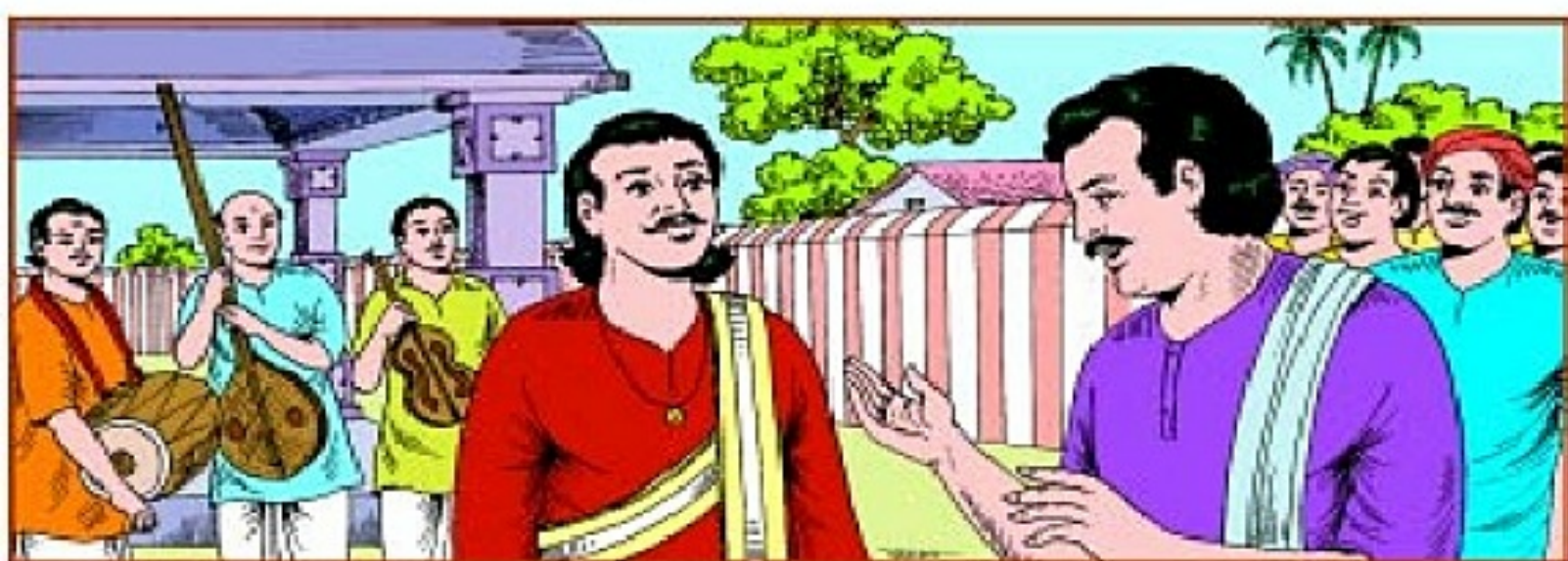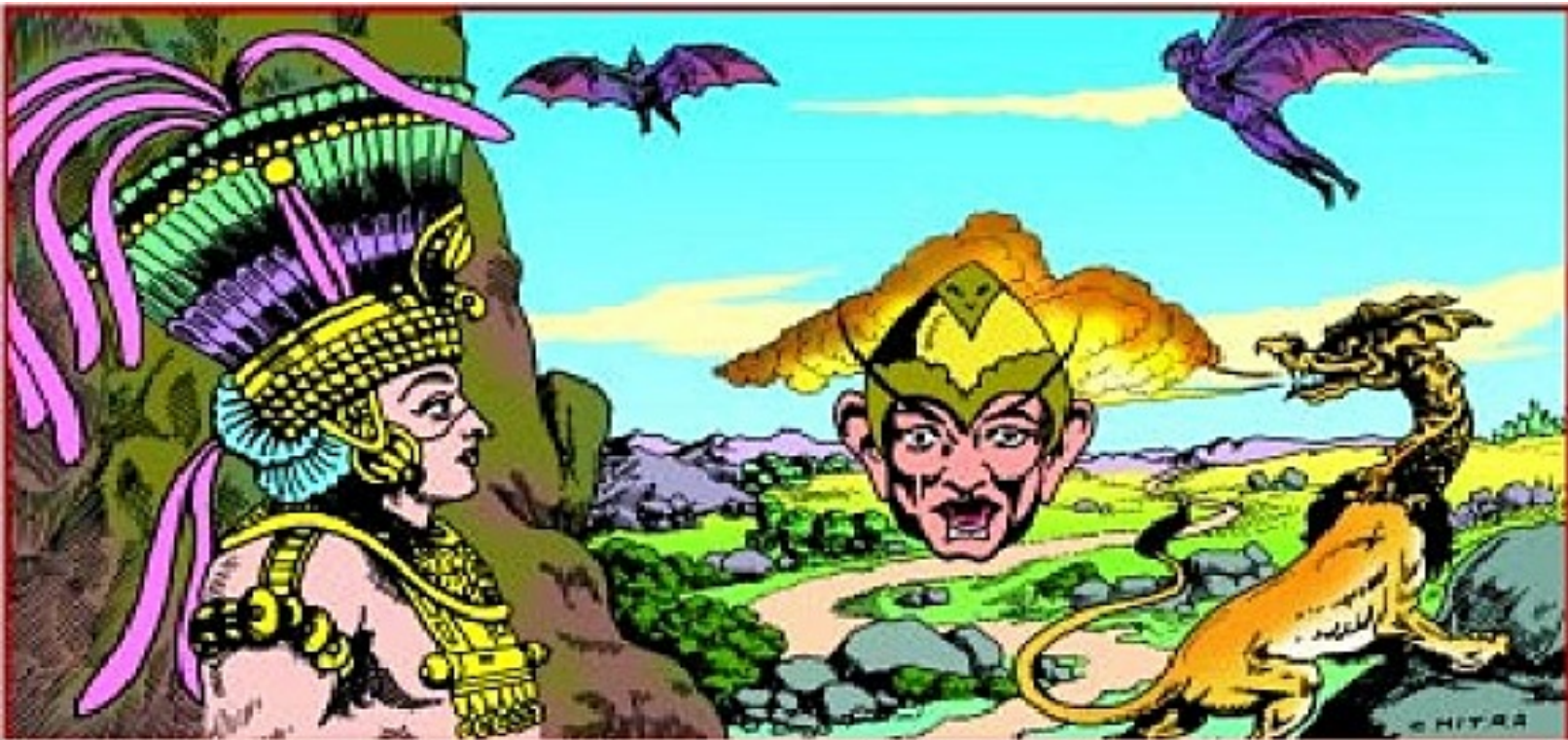
भयंकर घाटी

11

(ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक के पकड़े जाने के बाद, जयमल्ल और केशव के लिए नगरवासी सारा पहाड़ छानने लगे। केशव के बूढ़े पिता ने बताया कि वे दोनों भिखारी के भेस में शहर भाग गये हैं। यह सुन राजगुरु ने नगर में भिखारियों को पकड़ने के लिए सैनिकों को भेजा। उसके बाद)

राजगुरु द्वारा भेजे हुए सैनिक और नगर के उत्साही युवक देखते देखते सब भिखारियों को घेरकर राजमहल की ओर ले जाने लगे। इन लोगों में केवल भिखारी ही न थे, बेचारे गरीब लोग भी थे। मैले कपड़े पहननेवालों की, चीथड़े पहननेवालों की भी गिनती जब भिखारियों में की जाने लगी, तो उनकी संख्या हज़ारों से भी अधिक हो गई।

राजमहल के आँगन में इन सबका झुण्ड देखकर राजा को बड़ा आश्चर्य हुआ। उसने कभी कल्पना न की थी, कि उसके राज्य में खाने - पीने के मोहताज इतने सारे होंगे।

राजा, राजगुरु और ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक के आँगन में आते ही सैनिकों ने भिखारियों को एक पंक्ति में खड़ा कर दिया। राजा और राजगुरु के लिए उन्नत आसन की व्यवस्था की गई। ब्राह्मदण्डी को बाँधकर उनके पास खड़ा किया गया।

''गुरु, मैं अभी तक इसी ख्याल में था कि हमारे राज्य में खुशहाली है। पर इन सबको यहाँ देखकर मुझे ऐसा लगता है कि हमारे शासन में

कुछ न कुछ त्रुटियाँ हैं। महामन्त्री ने कभी यह संकेत भी न किया कि परिस्थितियाँ इतनी विषम हैं।'' राजा ने निरुत्साहित स्वर में सिर नीचा करके कहा।

राजगुरु ने मुस्कराते हुए कहा, ''महाराज, इसमें महामन्त्री की कोई गलती नहीं है। इन दरिद्रों को खजानों के धन से पालना सम्भव नहीं है। आखिर कब तक इन्हें राज्य की ओर से पालते रहेंगे। इससे भिखारियों की संख्या बढ़ती जायेगी। इन्हें आत्म निर्भर बनाने का कोई उपाय सोचना होगा। फिलहाल, बिना प्राणहानि के धन प्राप्त करने का एक मार्ग दिखाई देता है।'' कहकर राजगुरु ने राजा के कान में कहा, ''इस ब्राह्मदण्डी के द्वारा भयंकर घाटी की विपुल धनराशि को लेने का उपाय सोचिये।''

राजा का मुँह चमचमाने लगा। उसने ब्राह्मदण्डी की ओर सिर फेरकर कहा, ''ब्राह्मदण्डी, यदि तुमने अपना दुष्ट व्यवहार छोड़ दिया, तो हम तुमको क्षमा कर देंगे, हम वचन देते हैं।''

यह सुनते ही मान्त्रिक ने राजा को साष्टांग करके कहा, ''महाराज, मैं हमेशा आपका ही सेवक हूँ। प्रार्थना है कि दुष्टों की प्रेरणा पर मेरी राजभक्ति पर शंका न कीजिये। आपके खजानों को सोने चान्दी से भर देने के लिए ही मैंने काल भैरव की उपासना करके भयंकर घाटी के मार्ग...''

ब्राह्मदण्डी अभी अपना वाक्य पूरा भी न कर पाया था कि राजगुरु ने कहा, ''ब्राह्मदण्डी, इस घाटी के बारे में तुम यों सब के सामने न कहो। मैं तुम्हारी राजभक्ति से अपरिचित नहीं हूँ। बेफिक्र रहो। मगर खबरदार।''

ब्राह्मदणडी बिल्कुल चुप हो गया। इतने में सेनापति ने वहाँ आकर पंक्ति में खड़े भिखारियों को आगे बढ़ने के लिए कहा। सैनिकों के कहते ही भिखारी आगे बढ़े।

ब्राह्मदण्डी ने उनमें से हरेक का मुँह गौर से देखते हुए कहा, ''यह नहीं है, यह, यह भी नहीं है, यद्यपि इसका चेहरा जयमल्ल से मिलता है। पर वह इससे कुछ ऊँचा है। यह भी केशव से मिलता जुलता है। पर यह ऐंचा है। उसकी आँखें शेर की सी हैं।''

इस तरह भिखारियों की परीक्षा में एक घंटा लग गया। आखिर यह साफ हो गया कि उनमें जयमल्ल और केशव नहीं हैं।

“किसने यह अफवाह उड़ाई थी?” राजगुरु ने पूछा।

“उन लोगों ने जो पहले पहल जंगल में गये थे। वहाँ उसको किसी बूढ़े ने बताया था।” सेनापति ने कहा।

“वह....वह बूढ़ा, वह केशव का पिता है। मैं नहीं सोचता कि वह इतना धोखा दे सकता है। केशव, नहीं तो जयमल्ल की ही बनायी हुई यह कहानी है। सम्भव है कि वे अब तक राज्य की सीमा पार करके भी चले गये हों।” ब्राह्मदण्डी ने कहा।

राजुगरु को भी लगा कि उसके इस कथन में कुछ सचाई है। शायद वे दोनों अब तक भयंकर घाटी के रास्ते पर होंगे। सम्भव है कि वहाँ पहुँच रहे हों।

राजा, ब्राह्मदण्डी मान्त्रिक और राजगुरु फिर महल में वापस आये। सेनापति ने भिखारियों को राजमहल के द्वार से नगर में खदेड़ दिया। राजा और राजगुरु मिलकर विचार-विमर्श करने लगे।

“महाराज, हमें इस अच्छे मौके को हाथ से नहीं जाने देना चाहिये। भयंकर घाटी के चाँदी, सोने को हमें हथियाना ही होगा। ऐसा करने से आपका और प्रजा का भी कल्याण होगा। इस गुप्त धन को पाने की शक्ति केवल केशव में है, यह पहले ही मान्त्रिक बता चुका है। उसे पकड़ने के लिए ही वह इतने समय तक पहाड़ में धरना दिये हुए था। कहते हैं कि केशव के कन्धे पर फण उठाये साँप का चिह्न है। उस चिह्न के आधार
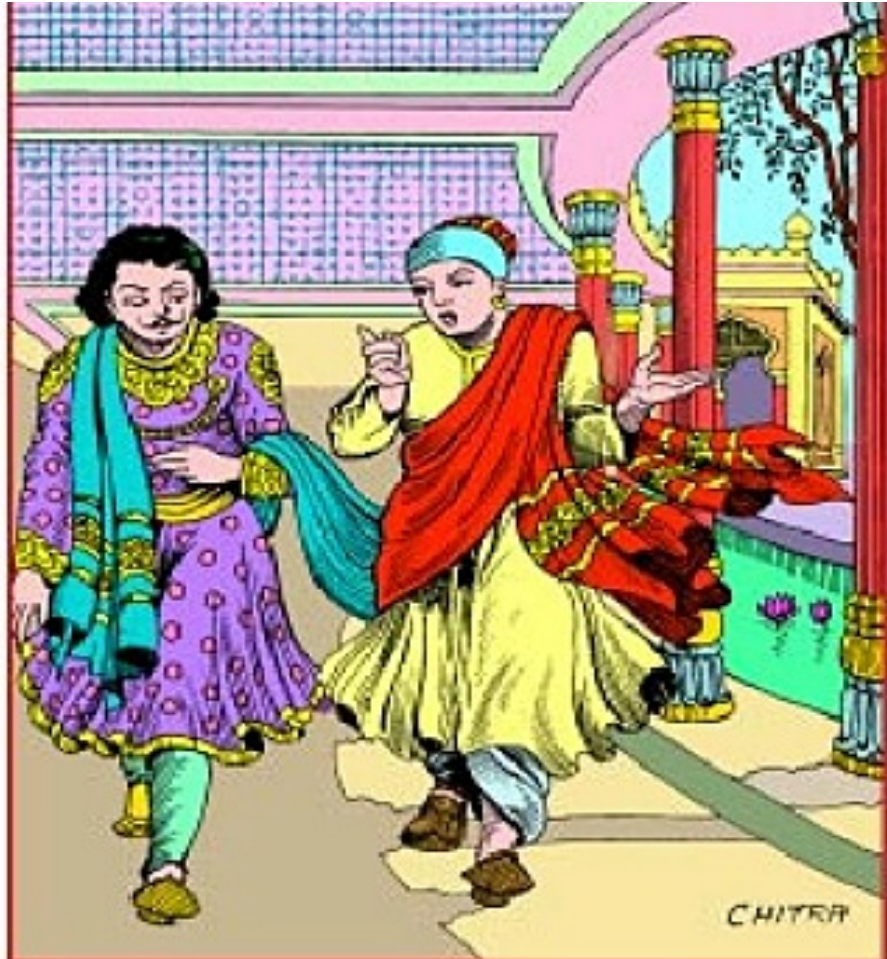
पर ही ब्राह्मदण्डी जान सका कि वह उसके काम के लिए उपयुक्त है।” राजगुरु ने राजा को समझाते हुए कहा।

“पर वह तो हमारी आँखों में धूल-झोंककर चला गया, मालूम होता है।” राजा ने कहा।

“हमें धोखे का जवाब धोखे से देना होगा। मुझे एक अच्छा उपाय सूझ रहा है। यदि आप अन्यथा न समझें तो बताता हूँ।” राजगुरु ने कहा।

राजा ने यह स्वीकार करते हुए धीमे-धीमे सिर हिलाया।

“हम यह घोषणा करवायें कि यदि यह केशव एक सप्ताह में नगर वापस आ जाये, तो आधा राज्य उसे दिया जायेगा। यदि वह इस अवधि में न आया, तो जो कोई उसको जीवित पकड़कर

लायेगा, या उसका सिर काटकर लायेगा, उसको सामन्त बनाया जायेगा। मैं समझता हूँ कि वह आधे राज्य के लालच में जरूर फिर हमारे राज्य में आ जायेगा। फिर उसका भयंकर घाटी में जाने के लिए कैसे उपयोग किया जाये, मैं और ब्राह्मदण्डी आपस में निर्णय करेंगे। यही एक रास्ता है।'' राजगुरु ने कहा।

आधा राज्य देने की बात सिर्फ़ केशव को ललचाने के लिए ही थी, वह सोच राजा इसके लिए मान गया। तुरंत ब्रह्मापुर राज्य में, ग्रामों में, नगरों में राजा की आज्ञा के अनुसार घोषणा कर दी गई।

अभी दो तीन दिन ही गुज़रे थे कि इस घोषणा की खबर केशव और उसके बूढ़े पिता, जयमल्ल तक भी पहुँची। नगरवासियों के पहाड़ पर से जाने के बाद वे तीनों एक पहाड़ी गुफ़ा में चले गये थे। वे सोचने लगे कि अब उन्हें क्या करना चाहिए।

''दाल में कुछ काला मालूम होता है।'' बूढ़े ने कहा।

''इसमें सन्देह ही क्या है। जब तक केशव साथ न होगा, तब तक भयंकर घाटी का धन नहीं मिल सकता। ब्राह्मदण्डी और राजगुरु ने कहा होगा कि इसके लिए उपयुक्त व्यक्ति केशव ही है।'' जयमल्ल ने कहा।

''शायद मेरे हाथ पैर बाँधकर वे मुझे भयंकर घाटी ले जाने की सोच रहे हैं। जब उनका काम पूरा हो जायेगा तब वे मुझे अवश्य फाँसी दे देंगे,'' केशव ने गुस्से में कहा।

''यह खतरा तो अब भी है, जानते हो, तुम्हारे सिर की कीमत आधा राज्य है। इसलिए जितनी जल्दी हम इस राज्य की सीमा से बाहर चले जायें उतना अच्छा है,'' जयमल्ल ने कहा।

''इस रूप में तो हमें कोई भी पहचान सकता है। अब तक इस घोषणा के बारे में और देश के लोग भी जान गये होंगे। क्या वे हमें जीने देंगे?'' केशव ने प्रश्न किया।

केशव के बूढ़े पिता की चिन्ता की सीमा न थी। उसने गुफ़ा से बाहर आकर चारों तरफ़ देखा, ''धन के लालच में कम से कम कुछ लोग फिर यहाँ आयेंगे। पहाड़ी गुफ़ाएँ और घाटियाँ छान डालेंगे । तुम यहाँ से तुरंत चले जाओ।''

''इन वेषों से काम नहीं बनेगा। क्षत्रिय युवक

का वेश पहनकर यह कहेंगे कि भ्रमण के लिए निकले हैं और इस तरह हम विंध्या देश पार कर जायेंगे। इसके लिए जितने धन की जरूरत है, वह ब्राह्मदण्डी ने गुफ़ा में कहाँ छुपा रखा है, मैं जानता हूँ।'' जयमल्ल ने कहा।

''उस गुफ़ा पर रात दिन दो सैनिक पहरा दे रहे हैं।'' केशव ने कहा।

''उन दोनों को मारकर हम गुफ़ा में नहीं जा सकते क्या?'' जयमल्ल ने पूछा।

''जहाँ तक हो सके, उन्हें बिना मारे ही गुफ़ा के अन्दर जाया जा सकता है। यदि सब कुछ चुपचाप करना है, तो शाम होने तक प्रतीक्षा करना अच्छा है।'' बूढ़े ने कहा।

यह करने के लिए केशव और जयमल्ल भी मान गये।

सूर्यास्त होने के बाद, जब तक खूब अन्धेरा न हो गया, तीनों ने बारी बारी से जिस गुफ़ा में वे थे, वहाँ पहरा दिया। उनको इसका बड़ा डर था कि किसी समय भी नगरवासी उन पर हमला कर सकते हैं। जब रात हो गई तो तीनों मान्त्रिक की गुफ़ा की ओर निकले। वे बिल्लियों की तरह चुपचाप पत्थरों के पीछेपीछे गुफ़ा के पास पहुँचे। सैनिकों ने उन्हें नहीं पहचाना।

बूढ़ा सैनिक के पास के पत्थर के पीछे गया, पत्थर के पीछे से सैनिक की पीठ पर तलवार टिकाकर उसने पूछा, ''चिल्लाओ मत, दूसरा कहाँ है?''

पीठ में तलवार की चोट लगते ही, सैनिक के

होश गायब हो गये, वह अभी सोच ही रहा था कि क्या किया जाये, केशव और जयमल्ल उसके सामने आ खड़े हुए।

''हमारे डाकुओं के सरदार ने तुम दोनों को मारकर गुफ़ा में रखी एक चीज़ को लाने के लिए कहा है, मगर हम तुम्हें मारना नहीं चाहते। हम अपना काम करके चले जायेंगे, तुम्हारे साथ का सिपाही कहाँ है?''

सैनिक हक्का-बक्का रह गया। गुफ़ा के पास खर्राटे मारकर सोते हुए अपने साथी को उसने दिखाया। तुरंत केशव और जयमल्ल उस पर कूदे और उसके हाथ पैर बाँधकर उसे एक तरफ़ फेंक दिया।

''तलवार मेरी पीठ में घुस रही है। तुम अपने डाकू साथी को तलवार हटाने के लिए कहो।''

पहला सैनिक यों गिड़गिड़ाने लगा। केशव और जयमल्ल ने पहले ही निश्चय कर लिया था कि बूढ़े का पहचाना जाना खतरनाक है। वे तो विंध्याचल की ओर जा रहे थे। पर बूढ़े को यहीं कुछ समय और रहना था।

''यदि तुमने इस डाकू का मुँह देखा, तो तुम्हारे प्राण पखेरु उड़ जायेंगे। वह बड़ा भयंकर है।'' कहकर केशव और जयमल्ल ने मिलकर उस सैनिक को बाँध दिया और उसकी आँखों पर भी पट्टी बाँध दी।

जयमल्ल गुफ़ा में गया, थोडी देर बाद धुँआ लगे कपड़ों से बाहर आया। उसके हाथ में एक थैली थी। जब उसने वहथैली इधर उधर घुमायी, तो वह घन घन ध्वनि करने लगी।

''इस थैले में सोने के सिक्के हैं। ब्राह्मदण्डी मांत्रिक ने कितनों को ही ठगकर इस धन को जमा किया था। इसीलिए इसको चुराना कोई बुरा नहीं है। इससे हम क्षत्रियोचित वस्त्र और शस्त्र खरीद सकते हैं। चलो अब चलें।'' जयमल्ल ने केशव से कहा।

तीनों वापस अपनी गुफ़ा में आये। सवेरा होते ही उन्होंने उस धन में से कुछ खर्च कर आवश्यक चीजें खरीदने के लिए बूढ़े से नगर तक जाने के लिए कहा। बूढ़े ने बताया कि नगर में वह इस तरह का रूप बदलेगा कि उसे कोई नहीं पहचान सकेगा। केशव और जयमल्ल इसके लिए मान गये।
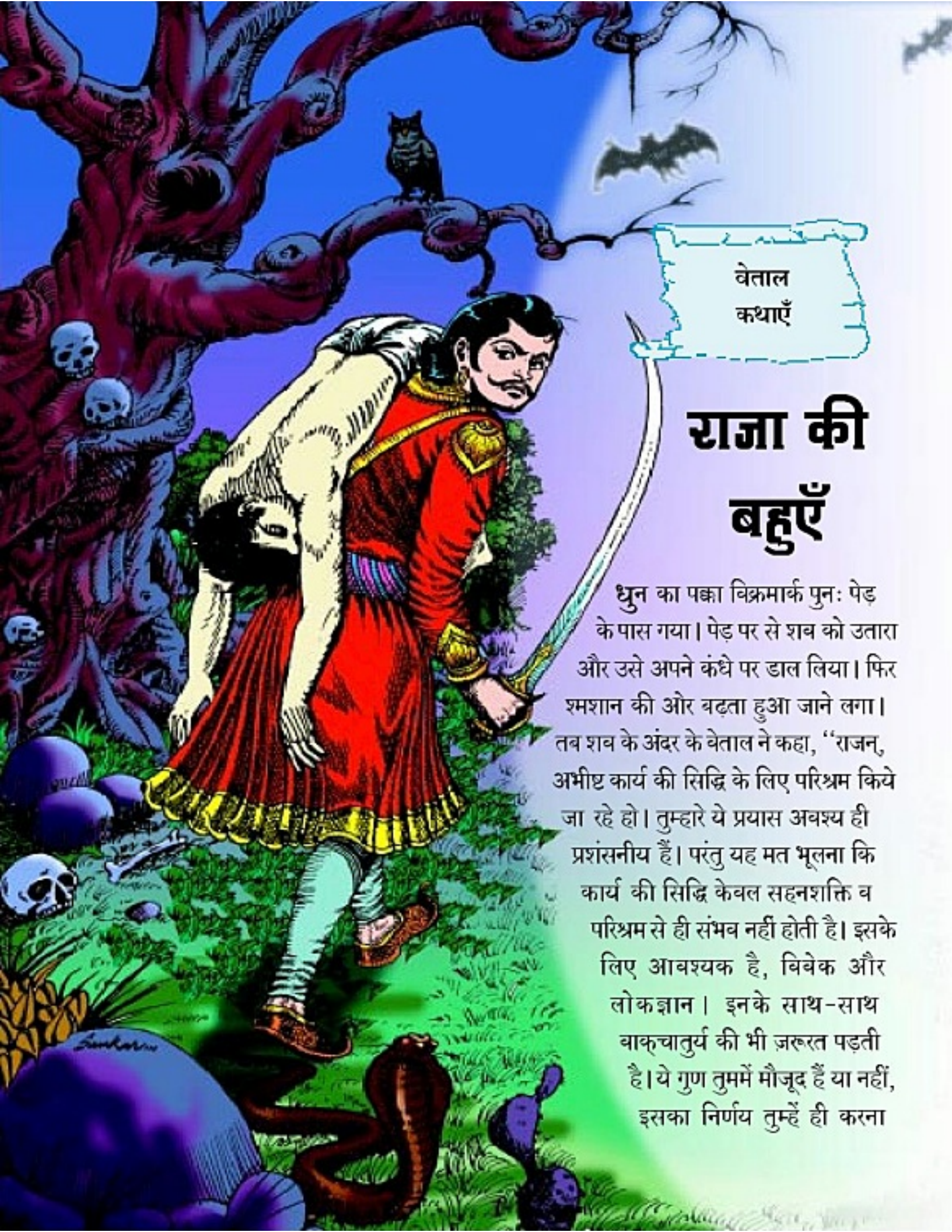
गुफ़ा में पत्थरों के पीछे छुपा छुपा जयमल्ल जब सोना निकाल रहा था तब उधर राजमहल में सोते ब्राह्मदण्डी को बुरे सपने आ रहे थे। उसे सपना आया कि कोई चोर उसके सोने के सिक्कों का थैला लेकर घन घन कर रहा है।

''चोर चोर, सोना, सोना'' चिल्लाताब्राह्मदण्डी पलंग पर से कूदा और दरवाजे की ओर भागने लगा।

वहाँ पहरा देते हुए सिपाही ने भाले से मान्त्रिक की छाती को निशाना बनाकर कहा, ''एक कदम आगे रखा कि नहीं कि मार दूँगा।'' फिर उसने साथ के सिपाहियों को बुलाया, ''आओ, आओ, ब्राह्मदण्डी भागने की कोशिश कर रहा है।''

(अभी है)

वेताल कथाएँ

राजा की बहुएँ

धुन का पक्का विक्रमार्क पुनः पेड़ के पास गया। पेड़ पर से शव को उतारा और उसे अपने कंधे पर डाल लिया। फिर श्मशान की ओर बढ़ता हुआ जाने लगा। तब शव के अंदर के वेताल ने कहा, "राजन्, अभीष्ट कार्य की सिद्धि के लिए परिश्रम किये जा रहे हो। तुम्हारे ये प्रयास अवश्य ही प्रशंसनीय हैं। परंतु यह मत भूलना कि कार्य की सिद्धि केवल सहनशक्ति व परिश्रम से ही संभव नहीं होती है। इसके लिए आवश्यक है, विवेक और लोकज्ञान। इनके साथ-साथ वाक्चातुर्य की भी ज़रूरत पड़ती है। ये गुण तुममें मौजूद हैं या नहीं, इसका निर्णय तुम्हें ही करना

होगा। इसके लिए मैं तुम्हें एक राजा की तीन बहुओं की कहानी सुनाऊँगा। उनकी कहानी तुम्हारे निर्णय में सहायक बन सकती है। थकावट दूर करते हुए आराम से उनकी कहानी सुनो।'' फिर वेताल उनकी कहानी यों सुनाने लगा :

महेंद्रपुरी के राजा का विवाह संपन्न हुए कई साल गुज़र गये। परंतु उनके संतान नहीं हुई। राजा और रानी ने संतान की प्राप्ति के लिए कितने ही व्रत रखे, कोई ऐसा पुण्य क्षेत्र नहीं, जहाँ वे नहीं गये हों। आख़िर निराश होकर वे इस निर्णय पर आ गये कि अब उनके कोई संतान नहीं होगी।

एक दिन रात को रानी ने सपने में पाँच मुखवाले नागराज के दर्शन किये। उन्होंने रानी से कहा, ''मेरे मंदिर के प्रांगण में काले पत्थर के नाग की प्रतिमा को प्रतिष्ठित करो। अगर तुम चालीस दिनों तक उस प्रतिमा का अभिषेक दूध से करोगी तो तुम्हें संतान होगी।''

सवेरे जागते ही रानी ने राजा से सपने के बारे में बताया और कहा, ''हमारे इष्टदेव नागेंद्र ने जैसे कहा, वैसे ही करेंगे।''

एक सप्ताह के अंदर ही, राज दंपति ने पर्वत पर नागेंद्र के मंदिर के प्रांगण में नाग प्रतिमा का प्रतिष्ठापन किया। राजा और रानी दोनों बड़ी ही श्रद्धा-भक्ति के साथ उस नाग प्रतिमा का अभिषेक दूध से करने लगे। चालीसवें दिन एक विचित्र व्यक्ति रानी के पास आया, जिसे उसने इसके पहले कभी नहीं देखा था। वह पतला, लंबा और बिल्कुल ही काला था।

अपने कंधे में लटकती हुई थैली में से उसने तीन आम निकाले और उन्हें रानी को देते हुए कहा, ''मंदिर के अंदर जाओ और इन्हें खाओ। तुम्हारे तीन सुंदर पुत्र होंगे।''

रानी ने श्रद्धापूर्वक आँखों से उन फलों का स्पर्श किया। मंदिर में जाकर उस विचित्र व्यक्ति के दिये फल खाये। नौ महीनों के बाद रानी तीन सुंदर पुत्रों की माँ बनी। राज दंपति ने उनके नाम रखे, जय, विजय, अजय। बड़े ही प्रेम के साथ वे उनका पालन-पोषण करने लगे।

तीनों राजकुमार सुंदरता में, अक़्लमंदी में, पराक्रम में किसी से भी कम नहीं थे। बीसवें साल की उम्र में पहुँचते-पहुँचते उन्होंने समस्त विद्याएँ सीख लीं। राजा ने, तीनों बेटों की शादियाँ एक ही मुहूर्त पर करवायीं। तीनों बहुएँ, सामंत राजाओं

की बेटियाँ थीं। समय बीतते-बीतते राजा का स्वास्थ्य गिरता गया।

बुढ़ापे ने उन्हें और कमज़ोर कर दिया। राजवैद्यों ने स्पष्ट कह दिया कि उनके स्वास्थ्य में सुधार की कोई गुंजाइश नहीं है। अब राजा के सामने कठोर समस्या खड़ी हो गयी। वे निर्णय नहीं कर पा रहे थे कि तीन युवराजों में से किसे राजा घोषित करें, क्योंकि तीनों समान रूप से समर्थ, बुद्धिमान् व पराक्रमी थे।

राजा ने खूब सोचा-विचारा और राजा को चुनने की जिम्मेदारी अपने प्रधान मंत्री चंद्रशेखर को सौंपी।

दूसरे ही दिन, प्रधान मंत्री ने युवराजों की तरह-तरह से परीक्षाएँ लीं। मुख्यतया, राजनीति से संबंधित प्रश्न उसने उनसे पूछे। हर प्रश्न में तीनों ने समान प्रतिभा दर्शायी।

प्रधान मंत्री चंद्रशेखर ने जो हुआ, राजा को बताया और कहा, ''महाराज, तीनों राजकुमार सिंहासन पर आसीन होने के योग्य हैं। उनकी योग्यता समान है। इनमें से किसी एक को राजा घोषित करें तो शेष दो के साथ अन्याय होगा।''

राजा चिंतित हो उठे और कहा, ''प्रधान मंत्री, लगता है, समस्या और जटिल होती जा रही है। अब हम करें भी क्या?''

मंत्री ने लंबी सांस खींचते हुए कहा, ''महाराज, एक उपाय है। अगर आप अनुमति देंगे तो आपकी तीनों बहुओं से अलग-अलग मिलना चाहता हूँ और उनसे एक सवाल पूछना

चाहता हूँ। उनके दिये जवाबों से यह फैसला आसान हो जायेगा कि इन तीनों राजकुमारों में से किसे राजा चुनें।''

राजा ने कहा, ''जो भी करना है, शीघ्र कीजिये। मेरे सिर पर से यह बोझ उतार दीजिये।'' कहते हुए उन्होंने अपना मुकुट दिखाया।

इसके बाद राजा के आदेशानुसार, पहले जय की पत्नी कमरे में आयी, जहाँ राजा और मंत्री दोनों बैठे हुए थे। मंत्री ने उससे पूछा, ''देवी, तुम्हारे पति को अगर राजा घोषित न किया जाए तो तुम क्या करोगी?''

जय की पत्नी के मुख पर निराशा स्पष्टगोचर हो रही थी। उसने दबे स्वर में कहा, ''किसी देश का राजा बनना भाग्य की बात है। अगर मेरे पतिदेव के भाग्य में यह बदा न हो तो चुप रहूँगी।''

उसके जाने के बाद विजय की पत्नी आयी। मंत्री ने वही सवाल उससे भी पूछा।

इसपर विजय की पत्नी ने उदास स्वर में कहा, ''क्या करूँगी? मन ही मन इस बात को लेकर कुढ़ती रहूँगी कि भगवान ने मेरी प्रार्थना नहीं सुनी। हो सकता है, मेरी श्रद्धा-भक्ति में कोई कसर रह गयी हो।''

अंत में अजय की पत्नी आयी। जैसे ही मंत्री ने सवाल किया उसने कड़ुवे स्वर मेंकहा, ''प्रधान मंत्री के दिमाग़ में ऐसे विचार उत्पन्न हुए कैसे? मेरे पति का राजा न होने का सवाल ही नहीं उठता। मैं अपने पति के शक्ति-सामर्थ्य, महिमा, कौशल बखूबी जानती हूँ। जीवन में उनकी हार कभी होगी ही नहीं।''

उसके जाते ही, मंत्री ने राजा से कहा, ''महाराज, अजय को राजा घोषित कीजिये।''

बेताल ने यह कहानी सुनाने के बाद कहा, ''राजन्, मंत्री चंद्रशेखर ने राजा को जो सलाह दी, वह विवेकहीन और राजनैतिक चातुर्य से खाली लगता है। बहुओं की परीक्षा लेकर, पुत्रों की योग्यताओं का पता लगाना क्या विचित्र नहीं लगता? दोनों बड़ी बहुओं ने अपने उत्तरों में सौम्यता दर्शायी। भगवान के प्रति उनका विश्वास उनके उत्तरों में स्पष्ट है। पर अजय की पत्नी ने, कड़ुवे स्वर में उत्तर दिया। लगता है कि उसमें अहंकार कूट-कूटकर भरा हुआ है। अपने वाक्चातुर्य से उसने यह कह डाला कि उसके पति के समान कोई दूसरा है ही नहीं। क्या मंत्री के मन में यह भय उत्पन्न हो गया कि अगर उसके पति को राजा घोषित न किया जाए तो वह पति

को विद्रोह करने के लिए सन्नद्ध करेगी और देश भर में अशांति फैलायेगी। क्या इसी भय के मारे मंत्री ने महाराज को ऐसी निरर्थक सलाह दी? मेरे इन संदेहों के समाधान जानते हुए भी चुप रह जाओगे तो तुम्हारे सिर के टुकड़े-टुकड़े हो जायेंगे।''

विक्रमार्क ने कहा, ''पहले ही यह स्पष्ट हो गया कि तीनों राजकुमार सिंहासन पर आसीन होने के लिए एक समान योग्यताएँ रखते हैं। तीनों में से कोई भी यह आग्रह नहीं करता कि वही सिंहासन पर आसीन हो। किन्तु पुरुष की व्यवहार-शैली पर पत्नी का प्रभाव थोड़ा-बहुत अवश्य होता है। बड़े से बड़े राजा भी इससे परे नहीं हैं। इसीलिए मंत्री जानना चाहते थे कि राजा की बहुओं की मानसिक स्थिति के अनुसार राजकुमारों की अतिरिक्त योग्यताएँ क्या हैं। इसी को दृष्टि में रखते हुए मंत्री ने यह निर्णय लिया। यह कोई निराला निर्णय नहीं है। इसमें कोई संदेह भी नहीं है कि राजा की तीनों बहुएँ मर्यादा का पालन करती हैं। दूसरों का आदर करना भी वे भली-भांति जानती हैं। परंतु जय की पत्नी सहनशील स्त्री है। परिस्थितियों से वह समझौता करनेवाली स्त्री है। विजय की पत्नी को भगवान पर पूरा-पूरा भरोसा है। परंतु अजय की पत्नी का स्वभाव इन दोनों से भिन्न है। पति के आत्मविश्वास और धैर्य-साहस को बढ़ानेवाले स्वभाव की है वह। राजा में अनिवार्य रूप से होना चाहिये, अटूट आत्मविश्वास। अजय की पत्नी जैसी स्त्रियाँ इस प्रकार के विश्वास को प्रोत्साहन देती हैं। यद्यपि तीनों राजकुमार एक समान योग्यताएँ रखते हैं, परंतु धर्मपत्नी का सहयोग और प्रोत्साहन उसकी अतिरिक्त योग्यता है। इसीलिए मंत्री ने अजय को राजा घोषित करने की सलाह दी। इस भय के मारे यह घोषणा करने के लिए नहीं कहा कि ऐसा न करने पर वह अपने पति से विद्रोह करायेगी या शांति में भंग डालेगी।''

राजा के मौन-भंग में सफल बेताल शव सहित गायब हो गया और फिर से पेड़ पर जा बैठा।

- कामेश पांडे की रचना के आधार पर।

संग्रहालय सम्मानित

मुम्बई के १५० वर्ष पुराना विक्टोरिया ऐण्ड अलबट म्यूज़ियम को कल्चर हेरिटेज कन्जर्वेशन कार्यक्रम २००५ के लिए यूनेस्को द्वारा इसके एशिया- पैसिफिक अवार्ड्स के तहत अवार्ड ऑफ एक्सेलेन्स से सम्मानित किया गया है।

संग्रहालय की स्थापना सन् १८५५ में भाऊ दाजी लाड द्वारा की गई किन्तु इसका नाम महारानी विक्टोरिया और उसके पति प्रिंस अलबट पर रखा गया। जब से यह मुम्बई के नगर निगम के अधिकार क्षेत्र में आया तब से इसकी देख रेख में कुछ गिरावट आई। सन १८८६ में, इन्डियन नेशनल ट्रस्ट फॉर ऑट ऐण्ड कल्चरल हेरिटेज (इनटैक) ने निगम के समक्ष कुछ सुधार लाने तथा संरक्षण कार्यक्रमों के लिए एक प्रयोगशाला स्थापित करने का प्रस्ताव रखा।

प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया गया और जमनालाल बजाज फाउण्डेशन से सहयोग माँगने का निश्चय किया गया।

संरक्षण कार्यक्रम पिछले वर्ष संग्रहालय की १५० वीं वर्षगाँठ के अवसर पर सम्पन्न कर लिया गया। कहा जाता है कि भिन्न-भिन्न कक्षों और स्तम्भों से गुजरते समय दर्शक को अरबियन नाइट्स के स्वप्न चित्र देखने जैसी अनुभूति होती है। कभी जीर्ण-शीर्ण दिखाई पड़नेवाले भवन को अब संस्थापक भाऊ दाजी लाड के नाम पर पुकारा जाता है।

तमिलनाडु की एक लोक कथा

राजा घर लौट आया

चोला देश में मंगलापुरम नाम का एक राज्य था जिसका शासक था राजारत्नम। वह सम्राट का जागीरदार था। वह अपना कर नियमित रूप से ठीक समय पर चुका देता था, इसलिए राज्य में शान्ति थी। वह क्षेत्र उपजाऊ था और प्रत्येक वर्ष अच्छी फसल होती थी। प्रजा से प्राप्त करों से शाही खजाना भरा पूरा रहता था।

राजारत्नम प्रजा के कल्याण में उदारतापूर्वक धन खर्च करता था। राजा समान रूप से शिल्पकारों, चित्रकारों तथा कवियों का भी संरक्षण करता था।

राजा का भाई मणिरत्नम को यह पसन्द नहीं था कि शाही खजाने का धन अनुत्पादक कार्यक्रमों पर खर्च किया जाये। उसे यह चिन्ता थी कि उसके भाई की मृत्यु के बाद ज ब वह सिंहासनारूढ होगा तब शायद ही खजाने में कुछ धन बचा रहेगा।

जैसे-जैसे दिन गुजरते गये, मणिरत्नम और भी महत्वाकांक्षी होता गया। उसने सोचा कि उसका भाई ही उसके मार्ग का काँटा है, इसलिए उसे हटा देना चाहिये। लेकिन वह स्वयं इस पापकर्म को करना नहीं चाहता था। इस काम के लिए उसे किसी और को पकड़ना होगा। उसने राजा के निकटवर्ती लोगों के साथ गुप्तरूप से इसकी चर्चा की।

उसने शाही बाबरचीखाने के बड़े बाबरची से बातचीत की, लेकिन उसने कहा कि भोजन के समय हमेशा अनेक अतिथि होते हैं। नहीं, वह राजा के आहार में विष नहीं मिला पायेगा। यदि दूसरों पर विष का असर हो गया तो वह पकड़ा जायेगा और उसे मौत की सजा मिलेगी।

अन्त में, मणिरत्नम ने राजा के हज्जाम को इस काम के लिए राजी किया, हालांकि उसने इस
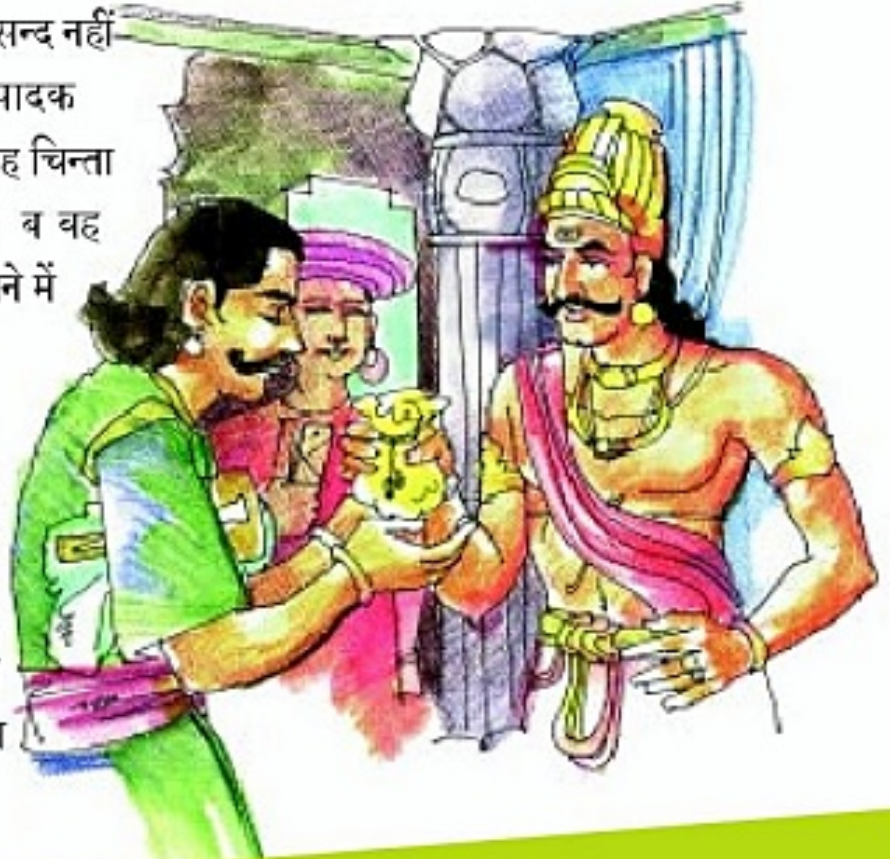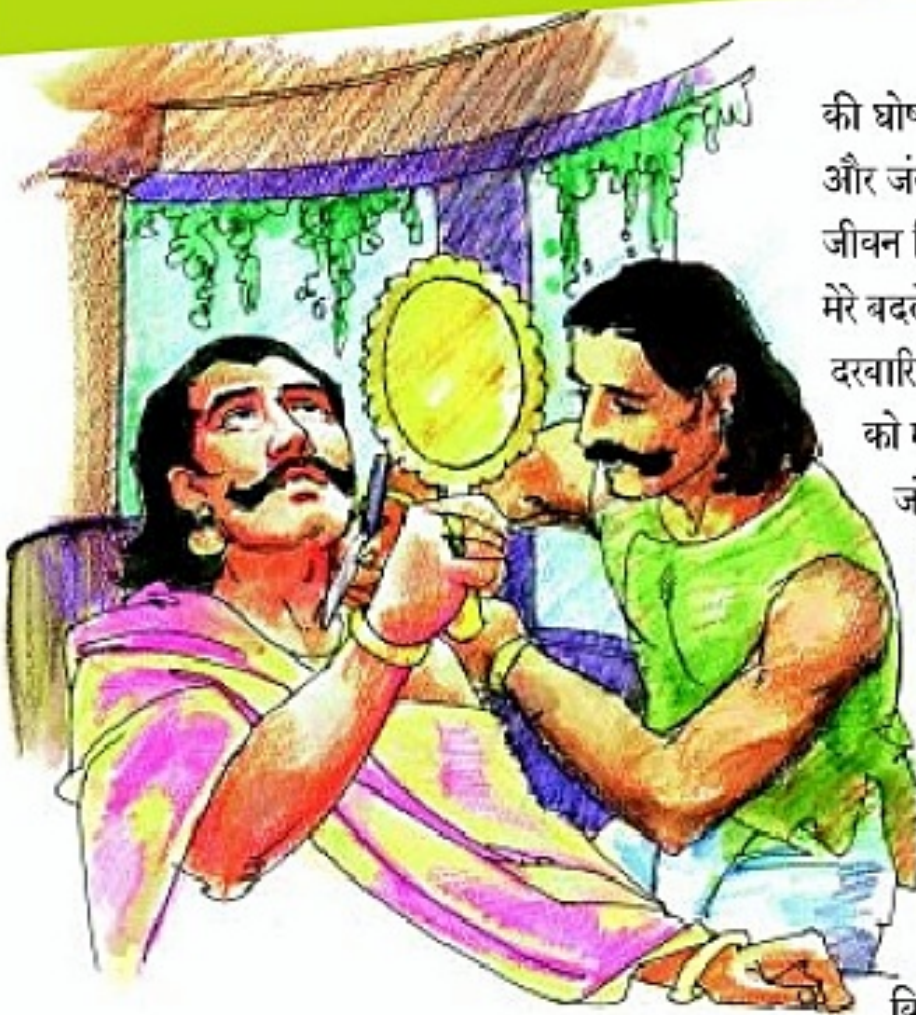
की घोषणा की, ''मैं राज कर्म से ऊब चुका हूँ और जंगल में जाकर कुछ वर्षों के लिए एकान्त जीवन बिताना चाहता हूँ। मेरा भाई मणिरत्नम मेरे बदले शासन की बागडोर संभालेगा।'' कुछ दरबारियों ने ऐसी मूर्खतापूर्ण निर्णय लेने से राजा को मना किया। उसने उनसे कहा, ''शायद जंगल के जीवन से यह प्रमाणित हो जायेगा कि मैं यहाँ अब तक कितना मूर्खतापूर्ण जीवन जीता रहा।'' उसने अपने भाई को बुलाकर दरबारियों की उपस्थिति में बिना किसी समारोह के उसे राजमुकुट सौंप दिया।

वह दूसरे दिन ही जंगल की ओर चल पड़ा। अब, हरेक आदमी जान गया कि मणिरत्नम का अपने भाई के प्रति

कुकर्म के लिए पुरस्कार में नकद धन राशि लेने से इनकार कर दिया। किन्तु उसने दूसरे दिन राजा की हजामत करते समय उसे इस षड्यन्त्र का रहस्योद्घाटन कर दिया। राजारत्नम कुछ देर के लिए मौन हो गया। हजाम ने बाद में राजा के परिचारकों में अपने कुछ मित्रों को यह बात बताई। उसे मालूम हुआ कि वे लोग भी राजा के वफादार रहना चाहते हैं, इसलिए उन लोगों ने भी मणिरत्नम के दिये लालच में पड़ने से इनकार कर दिया।

शीघ्र ही दरबार के सभी लोगों को राजारत्नम की हत्या के षड्यन्त्र के विषय में मालूम हो गया। जो भी हो, राजा के निर्णय ने सब को आश्चर्य में डाल दिया। उसने अपने भाई के लिए राज्यत्याग

कितना घिनावना और अनुचित व्यवहार था। वैसे भी, वह लोगों का आदर-सम्मान प्राप्त नहीं कर सका। वे सब सशंक होकर उसके अगले कदम की प्रतीक्षा करने लगे। मणिरत्नम कुछ दिनों तक खुश रहा, हालांकि किसी दरबारी या सेवक के चेहरे पर उसे कभी मुस्कान दिखाई नहीं पड़ी। मणिरत्नम ने सोचा कि प्रजा के बीच न जाकर महल में ही रहना उसके लिए अधिक बुद्धिमानी होगी।

अपने आस-पास के लोगों की कठोर नजरें देखकर उसे यह शक हुआ कि जैसे उसने अपने भाई के विरुद्ध षड्यन्त्र रचा था वैसे ही कोई उसे मार कर राजारत्नम को पुनः वापस लाने का

षड्यन्त्र रच रहा है। इसलिए उसने सोचा कि यदि उसे जीवित रहना है तो उसे अपने भाई की जान लेनी होगी यद्यपि राजारत्नम जंगल में रह कर अपना सारा समय भगवान के ध्यान में बिता रहा था। मणिरत्नम ने इस कार्य के बदले आधा राज्य देने का वचन दिया, फिर भी कोई आगे नहीं आया। मणिरत्नम की सहायता करने के लिए कोई तैयार नहीं था।

एक दिन एक गरीब शायर उसके दरबार में आया। वास्तव में, जब से राजारत्नम जंगल चला गया था, मंगलापुरम के नागरिकों को किसी प्रसिद्ध या उदीयमान कवि को सुनने का मौका नहीं मिला था। इस कवि ने सीधा दरबार में जाकर अपना महाकाव्य सुनाने की स्वीकृति की याचना की। जब राजा को यह पता चला कि काव्य का विषय राज्य का इतिहास है, उसकी प्रशंसा नहीं तो उसने उसकी कविता सुनने से इनकार कर दिया। ''मैं तुम्हारी कविता सुनना नहीं चाहता। बल्कि उसके बदले यदि तुम जंगल जाकर मेरे भाई का सिर ला सको तो तुम्हें आधा राज्य दे दूँगा!'' उसने कहा।

कवि एक क्षण भी दरबार में ठहरना नहीं चाहता था। वह शीघ्रता से जंगल की ओर चला गया यद्यपि उसका उद्देश्य कुछ और था। उसने राजारत्नम से मिलकर नये राजा से अपनी भेंट के बारे बताते हुए कहा कि कैसे उसने मंगलापुरम के ऐतिहासिक काव्य को सुनने से इनकार कर दिया जबकि पुराने राजा हमेशा कवियों और चित्रकारों को प्रोत्साहन दिया करते थे।

राजारत्नम ने खेद प्रकट करते हुए उस परिस्थिति में उसे मदद करने में असमर्थता प्रकट की और कहा, ''लेकिन, तुम एक काम करो मेरे मित्र। यह लो मेरी तलवार और मेरा सिर काट डालो और राजा से आधे राज्य का पुरस्कार पाकर सुख से जीवन बिताओ।''

कवि भयभीत हो गया। ''मैं यह कैसे कर सकता हूँ महाराज? मैं और मेरा परिवार भूख से तड़प कर मर जाये तब भी मैं यह घृणित कर्म नहीं करूँगा। कृपया मुझे क्षमा करें!'' कवि घर लौट आया। उसने राजारत्नम से मुलाकात के बारे में
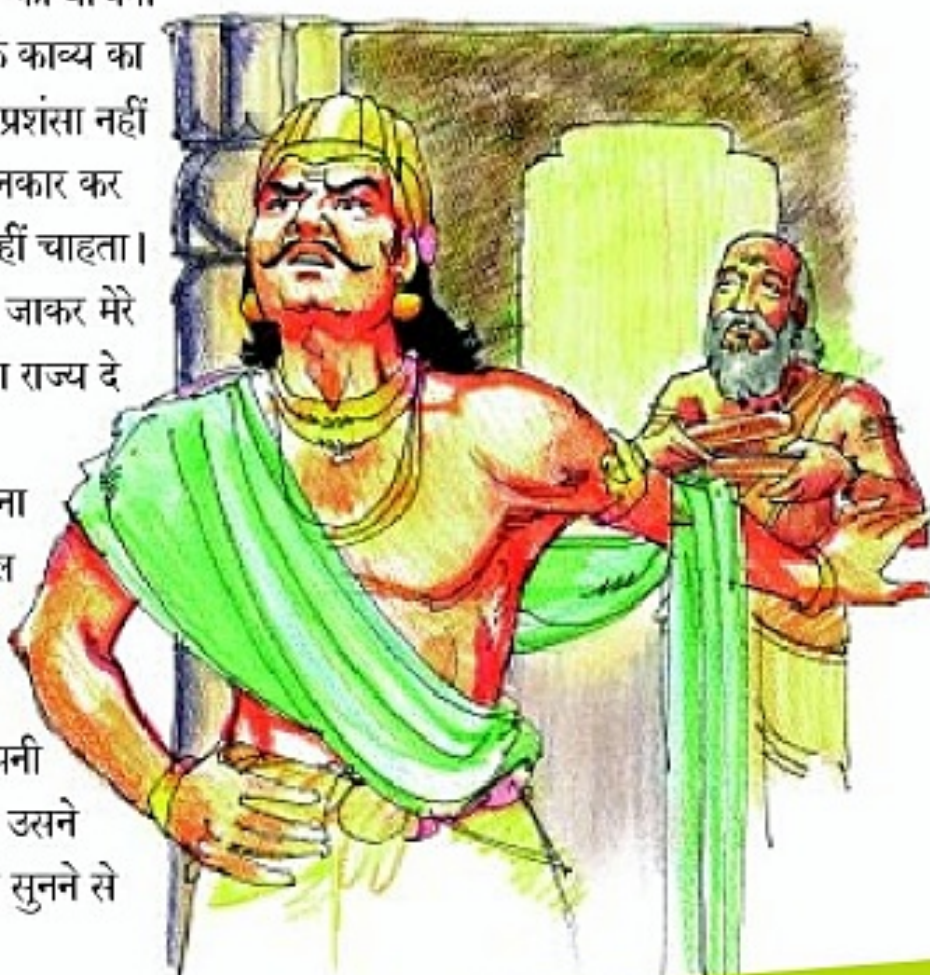
कविता लिखी और उसे मणिरत्नम के पास भेज दी। उसकी कविता के अन्तिम छन्द का तात्पर्य कुछ इस प्रकार था:

"सिर विहीन मंगलापुरम ने मूल्य देकर अमूल्य सिर लेना चाहा। सिर एक गरीब ब्राह्मण की रक्षा के लिए अपने को अर्पित करने को तैयार है, जिसे राज्य के लिए अपना सिर देने में कोई हिचक नहीं है।"

मणिरत्नम पश्चाताप से भर गया। एक ओर इतने बड़े इनाम के लिए उसका काम करने को कोई तैयार न था। दूसरी ओर उसका भाई उसकी दुष्टता के लिए दण्ड देने के बदले अपने प्राण देने के लिए इसलिए तैयार है कि एक गरीब कवि सुखपूर्वक रह सके। उसने महल में अपना घोड़ा मँगवाया।

वह राजा की हैसियत से पहली बार महल से बाहर निकला। वह निरस्त्र जंगल की ओर चल पड़ा। जंगल पहुँचने पर जैसे ही उसने अस्तव्यस्त वस्त्र और बढ़ी हुई दाढ़ी में अपने भाई को देखा, वह उसके चरणों पर गिर पड़ा और क्षमा याचना करने लगा, "भाई, उस कवि ने मेरी आँखें खोल दीं। यह मेरी निरी मूर्खता थी कि मैंने आप जैसे राजा को मारने की कोशिश की। उससे भी बड़ी मूर्खता मैंने तब की जब आप के ही दिये राज्य का आधा भाग आप के सिर के लिए इनाम में रखा। कृपया मेरे साथ महल में आइये और अपना राज्य वापस ले लीजिये। मैं मंगलापुरम में एक सामान्य नागरिक की हैसियत से भी रहने योग्य नहीं हूँ। कृपया मुझे क्षमा कर दीजिये।"

मणिरत्नम ने अपने भाई से घोड़े की बागडोर संभालने का अनुरोध किया और स्वयं उसके पीछे बैठा। महल के फाटक पर राजा को सुनने के लिए सामान्य भीड़ इकट्ठी थी। बहुत लोग यह देख कर चकित थे कि उनका प्रिय राजा महल में वापस लौट आये। उनकी जय जयकार की आवाज सुनकर महल के लोग राजारत्नम के स्वागत के लिए प्रांगण में एकत्र हो गये।

मणिरत्नम अपने भाई को दरबार में ले गया और राजमकुट वापस देकर उसे सिंहासन पर बिठाया। वह स्वयं राजा राजारत्नम के चरण पकड़ कर फर्श पर बैठा।

दरबारियों की आँखों से खुशी के आँसू छलछला पड़े।

समाचार-झलक

हाथियों की ई–ट्रैकिंग

केरल में लगभग ८०० बन्दी हाथी हैं। उनमें से ८० प्रतिशत हाथियों के स्वामित्व अथवा उनकी गतिविधियों के बारे में विवरण उपलब्ध नहीं हैं। जो भी हो, जैसे ही उन पशुओं के चर्म के नीचे माइक्रोचिप्स् आरोपित कर दिये जायेंगे, वन विभाग शीघ्र ही उन्हें खोज लेने में समर्थ हो जायेगा।

इस योजना को २००३ में स्वीकृति मिल गई थी, किन्तु माइक्रोचिप्स की कमी के कारण इसके कार्यान्वयन में विलम्ब हो गया। अब करीब १,२०० माइक्रोचिप्स राज्य में भेजे जा चुके हैं। जब ये चिप्स आरोपित हो जायेंगे तब एक विशेष यन्त्र की सहायता से रीडिंग्स ली जा सकती हैं। इस प्रयोग के द्वारा अधिकारीगण पशुओं की व्यवहारगत शैली, उन्हें प्रभावित करनेवाले रोगों के विषय में अभिलेख सूचना तथा उन्हें दी गई चिकित्सा, टीका तथा अन्य विवरण का अध्ययन करसकेंगे जो तब उपग्रह के द्वारा नियन्त्रण कक्ष में पहुँच जायेंगे। हाथियों के बारे में सॉफ्टवेयर १४ जिलों में अभी तैयार किये जा रहे हैं।

लिखाई का कीर्तिमान

चेन्नई की एक कॉलेज छात्रा टी.कविता फुलिसकेप कागज का दस्ता लेकर मेज पर बैठ गई और लिखना शुरू किया। वह २६ घण्टों तक लगातार लिखने के बाद उठी। तब तक उसने एक नया कीर्तिमान बनाने के लिए ३१२ शीट (एक तरफ) कागज पर लिख दिया। इसके पहले बिना रुके लिखने का २४ घण्टों का कीर्तिमान बरकरार था। अब कविता को भारत के लिमका बुक ऑफ रिकॉर्ड्स में प्रविष्टि का आश्वासन दिया गया है।

गोविंद की अक़्लमंदी

गोविंद एक सामान्य किसान था। बैलों की उसकी एक जोड़ी थी। एक दिन वह शाम को खेत का काम पूरा करके घर लौटा। फिर उसने बैलों को पानी पिलायी, हरी घास खिलायी और झोंपडी में बांध दिया। पर, जब वह सबेरे झोंपडी में गया, तब उसने देखा कि वहाँ अब एक ही बैल है। उसकी समझ में नहीं आया कि आख़िर दूसरा बैल गया कहाँ। वह बहुत परेशान हो उठा। उसने बहुत ढूँढा, पर दूसरे बैल का पता नहीं चला।

वर्षा ऋतु का प्रवेश हुआ। जमीन जोतनी है, पर भला एक ही बैल से कैसे जोते। यह तो संभव नहीं है, इसलिए गोविंद ने पशुओं की हाट में दूसरे बैल को खरीदने का निश्चय किया।

गोविन्द के बैल को एक चोर ले गया था। वह भी हाट में उसे बेचने गया।

गोविंद एक अच्छे बैल को खरीदने के लिए हाट में घूमने-फिरने लगा। उसे एक जगह पर अच्छा और मज़बूत बैल दिखायी पड़ा। गोविंद उसके नज़दीक गया तो उसके आश्चर्य की सीमा न रही। वह उसी का बैल था।

बैल बेचनेवाले से उसने कड़े स्वर में कहा, ''यह सरासर धोखा है। तुम आख़िर हो कौन? यह तो मेरा बैल है। चार सालों से यह मेरे पास है और इसी की सहायता से खेती कर रहा हूँ।''

गोविंद की बातें सुनते ही, चोर पहले घबरा गया, पर अपने को संभालते हुए उसने कहा, ''दिन दहाडे झूठ बोले जा रहे हो। यह बैल चार सालों से तुम्हारे पास था, एकदम झूठ। यह बैल तो पाँच सालों से मेरे पास है। इसी की सहायता से खेती करता आ रहा हूँ। बेटी की शादी के लिए रक़म की ज़रूरत पड़ी, इसीलिए इसे बेचने ले आया।''

गोविंद सोच में पड़ गया कि अब क्या करूँ। हाट में आये कुछ लोग वहाँ इकट्ठे हो गये और

विनायक जोशी

जानना चाहा कि असल में झगड़ा किस बात को लेकर हो रहा है। झगड़े का कारण जानने के बाद वहाँ इकट्ठे लोगों में से एक ने गोविंद से पूछा, ''बेकार झगड़ते क्यों हो? तुम्हारे पास क्या कोई सबूत है कि यह बैल तुम्हारा है?''

''सबूत चाहिये?'' कहते हुए गोविंद ने अपने कमर से तौलिया निकाला और उससे बैल की दोनों आँखों को ढ़कते हुए पूछा, ''तुम्हारा दावा है कि यह बैल तुम्हारा है। मेरे बैल की एक आँख अंधी है। बताना, कौन-सी आँख अंधी है?''

यह सवाल सुनते ही चोर घबरा गया। अगर ग़लत बताये तो उसे चोर ठहरायेंगे। उसके पालतू कुत्ते की बायीं आँख अंधी है। उसे यह याद आ गया और उसने कह डाला, ''मेरे बैल की बायीं आँख अंधी है।''

गोविंद, उसके जवाब पर ठठाकर हँस पड़ा और तौलिये को बैल की बायीं आँख से हटाते हुए उसने वहाँ उपस्थित लोगों से कहा, ''आप लोग खुद देख लीजिये। इस बैल की बायीं आँख कितनी अच्छी है।''

चोर भागने के उद्देश्य से इधर-उधर देखने लगा और घबराहट-भरे स्वर में कहने लगा, ''हाँ, मैंने ग़लत कह दिया। मेरे बैल की बायीं नहीं, दायीं आँख अंधी है।''

''दायीं हो या बायीं, तुम्हारे बैल की एक आँख अंधी है न?'' गोविंद ने पूछा।

''हाँ, हाँ, इसमें कोई संदेह नहीं। मेरे बैल की एक आँख अंधी है,'' चोर ने कहा।

गोविंद ने बैल की आँख से तौलिया हटा कर चोर से कहा, ''अरे बदमाश, मेरा बैल अंधा है ही नहीं। देखो, उसकी दोनों आँखें कैसे चमक रही हैं।'' उत्साह से उसने कहा।

फौरन लोगों ने चोर को कसकर पकड़ लिया। जब वह अपने को छुडाने की कोशिश करने लगा, तब ज़मींदार के नौकर वहाँ आ धमके। उन्होंने उसके दोनों हाथों को बाँध दिया और उसे खींचते हुए दिवान के पास ले गये।

गोविंद फिर से अपने बैल को पाने में सफल ही नहीं हुआ बल्कि चोर को भी पकड़वाया। लोगों ने उसकी अक़्लमंदी की बहुत तारीफ़ की।

ग्रामाधिकारी

रामापुर का ग्रामा धिकारी प्रसाद बड़ा भूस्वामी था। ऐसे तो उसे पिता से दस एकड़ खेत ही प्राप्त हुआ था, परंतु अपनी अक़्लमंदी से और सूद का व्यापार करके उसने बहुत धन कमाया। उस गाँव के अधिकांश लोग गरीब थे। जब कभी भी उन्हें धन की ज़रूरत पड़ती थी, वे प्रसाद की सहायता पर ही निर्भर रहते थे। इसलिए उस गाँव में प्रसाद की ही मनमानी चलती थी। उसका विरोध करनेवाला कोई था ही नहीं।

परिस्थितियाँ प्रसाद के बिल्कुल अनुकूल थीं, इसलिए उसमें क्रमशः अहंकार बढ़ता गया। ग्रामाधिकारी होकर भी, वह गाँव की आवश्यकताओं के प्रति बिल्कुल लापरवाह रहता था। उसे इस बात का भय था कि गाँव के बच्चे अगर पढ़ेंगे-लिखेंगे तो बड़े हो जाने पर वे उसका विरोध करेंगे और ग्रामाधिकारी के पद से उसे हटा देंगे, इसलिए उसने उजडी पाठशाला की मरम्मत भी नहीं करवायी। अगर नये अध्यापक गाँव में आते तो उन्हें डरा-धमकाकर भगा देता था।

इन परिस्थितियों में सूरज नामक एक नया अध्यापक उस गाँव में पढ़ाने आया। यह युवक कृष्णापुर का निवासी था और प्रसाद की छोटी बहन का बेटा था। उसने मामा से किये जानेवाले अन्यायों और अत्याचारों को देखकर ग्रामीणों की सहायता करने का निश्चय किया।

चूँकि सूरज भानजा था, इसलिए प्रसाद उसे डरा न सका। उसने उसे घर बुलाया और समझाते हुए कहा, ''इस कुग्राम में कर भी क्या सकते हो? शिक्षित हो। यहाँ पढ़ाते रहने से तुम ज़िन्दगी में आगे बढ़ नहीं सकते। कूप मंडूक ही बने रहोगे। किसी बड़े शहर में तुम्हारा तबादला करा दूँगा।''

''शहरों में काम करने के लिए कितने ही शिक्षित लोग हैं। इन दूरस्थ गाँवों में आने के लिए कोई भी शिक्षित व्यक्ति तैयार नहीं। इसीलिए मैं यहाँ आया हूँ। मामाजी, इन गाँववालों को शिक्षा की बड़ी ज़रूरत भी है।'' सूरज ने कहा।

उसकी बातों को सुनकर प्रसाद मन ही मन क्रोधित हो उठा, पर उसे प्रकट नहीं किया।

सूरज ने गाँववालों की सहायता से उजडी पाठशाला का पुनरुद्धार किया और बच्चों को पढ़ाने में लग गया। रातों में वह बयस्कों को पढ़ना-लिखना सिखाता था। साथ ही वह उन्हें आत्मनिर्भर होने के लिए आवश्यक पेशों के बारे में भी बताता रहता था और इसके लिए सरकार की तरफ़ से जो सहायताएँ मिलती हैं, उन पर बिशद रूप से प्रकाश भी डालता रहता था। ग्रामीणों के जीवन में धीरे-धीरे परिवर्तन होने लगा।

यह देखते हुए प्रसाद का क्रोध और बढ़ गया। उसे डर लगने लगा कि इससे ग्रामीण उसकी परवाह नहीं करेंगे। सूरज को गाँव से कैसे भगाना है, इसी बात को लेकर सोचते हुए वह एक दिन शाम को पाठशाला गया। उस समय सूरज बच्चों को कुछ बता रहा था। प्रसाद ने छिपकर उसकी बातें सुनीं।

"प्रकृति में जो परिवर्तन होते रहते हैं, वे हमारे हस्तक्षेप के बिना ही होते हैं। किन्तु, हमारी ज़िन्दगियों में ये परिवर्तन तभी संभव हैं, जब हम इनके लिए प्रयत्न करते हैं। ऐसे तो हमारा जन्म एक समान हुआ है, परंतु जो अबकाश प्राप्त होते हैं, उनका सही उपयोग करने पर, उनका फ़ायदा उठाने पर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। परंतु हाँ, इसके लिए कड़ी मेहनत करनी होगी। जो ऐसा नहीं करते, बे पिछड़ जाते हैं। जो जीवन में आगे बढ़ते हैं, उन्हें चाहिये कि बे पिछड़े लोगों की मदद करें। उनमें यह उदारता अवश्य हो। द्वेष, ईर्ष्या, प्रतिकार इन दुर्गुणों से दूर रहना चाहिये। पूरा गाँव अच्छा हो, तभी हर कोई अच्छा रह सकता है।" यों सूरज उन्हें हितबोध करता रहा, उन्हें उनका कर्तव्य समझाता रहा।
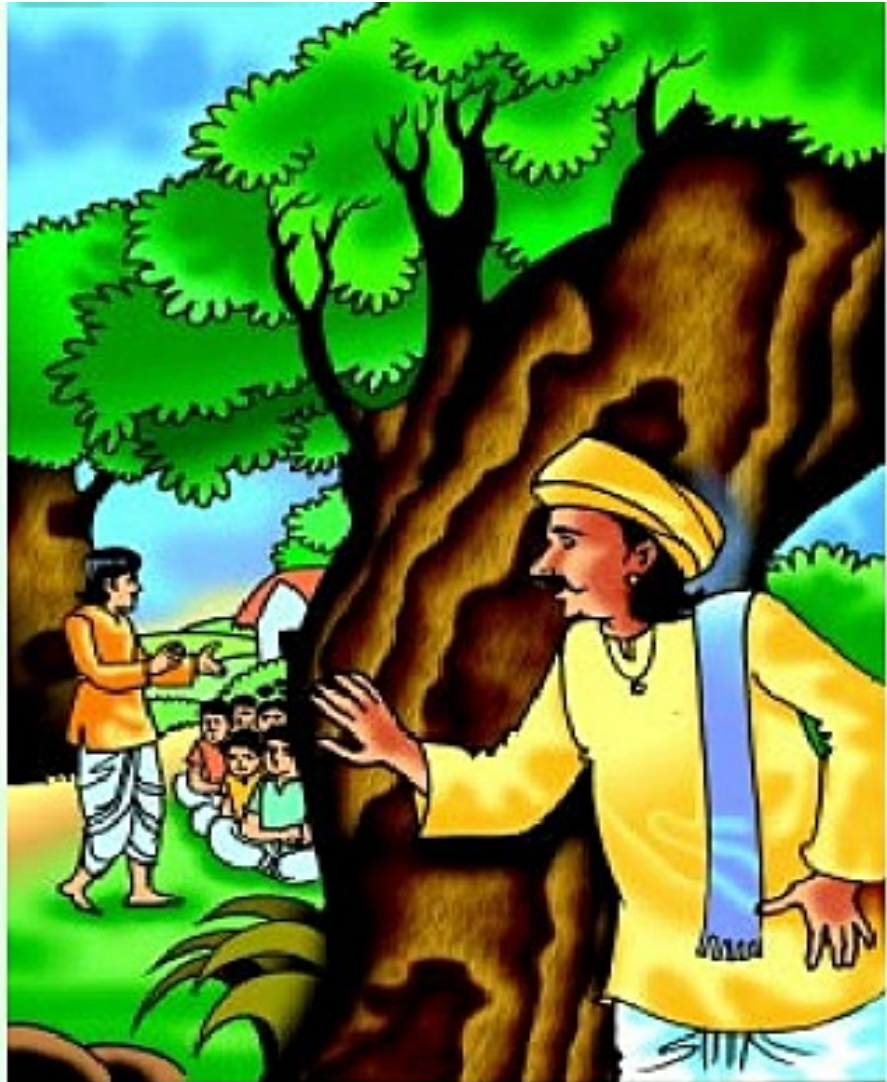
उसकी बातों में जो बास्तबिकता व सच्चाई भरी हुई थी, प्रसाद उन्हें जान गया। उसमें इन बातों से अचानक परिवर्तन हुआ। वह सबके सामने आया और कहा, "सूरज, तुम अभी युवक हो, पर तुमने मेरी आँखें खोल दीं। ग्रामाधिकारी होकर भी जो काम मैं नहीं करवाया, तुमने छे महीनों में वह कर दिखाया। तुम इस गाँव के ग्रामाधिकारी होने के योग्य हो।"

"आपमें यह परिवर्तन आये, इसी की मैं प्रतीक्षा में था। मामाजी, अब आप सच्चे ग्रामाधिकारी हैं। आगे से गाँववालों की आवश्यकताओं की पूर्ति करते हुए अच्छा नाम कमाइये। कल सबेरे ही मुझे यहाँ से रंगापुर जाना है।" सूरज ने कहा।

-प्रवीणा, आंध्र प्रदेश

धन-पिपासु

पालक हस्तवर नामक गाँव का निवासी था। वह धन-पिपासु व अव्वल दर्जे का कंजूस था। उसने सूद के व्यापार से बहुत धन कमाया।

वह एक दिन सूद वसूल करने पड़ोस के गाँव में गया। लौटते समय अंधेरा छा चुका था। फिर भी स्वग्राम पहुँचने निकल पड़ा। उस समय सामने से आते हुए घोडा गाडीवाले ने उसे पहचान लिया और कहा, ''पालक जी, एक रुपये का किराया देंगे तो आपको सुरक्षित गाँव पहुँचा दूँगा।''

पालक ने चिढ़ते हुए कहा, ''मैं पैदल जा सकता हूँ। इतना तेज़ जा सकता हूँ कि तुम्हारा घोड़ा भी मेरी बराबरी नहीं कर सकता।''

''एक रुपया देने के लिए भी आप इतनी आनाकानी कर रहे हैं। जानते हैं, मार्ग में भूत-प्रेत भी हैं।'' गाड़ीवाले ने पालक को डराने के उद्देश्य से कहा।

परंतु, पालक ने उसकी बातों की परवाह नहीं की और पैदल चलपड़ा। चांदनी रात थी, इसलिए रास्ता साफ़ दिखायी दे रहा था। रास्ते में, जटाओं से घिरा बरगद का एक विशाल वृक्ष था, जिसके पास ही एक पुरानी व उजडी सराय भी थी। सराय के सामने खड़े वृद्ध पुरुष ने उसे देखते ही कहा, ''कुशल पूर्वक हो, पालक?''

पालक ने उसे ग़ौर से देखते हुए कहा, ''मैंने तो इसके पहले तुम्हें कभी नहीं देखा। तुम हो कौन?''

''मैं तुम्हारे सात पुश्तों के पहले का हूँ। यानी मैं तुम्हारा परदादा हूँ।'' वृद्ध ने कहा।

''मेरे परदादा तो मेरे जन्म के पहले ही मर चुके। मैं यह विश्वास ही नहीं कर सकता कि उनका परदादा अब भी जीवित है।'' उसने कह तो डाला, पर उसमें भय पैदा हो गया। फिर भी अपने को संभालते हुए पूछा, ''तुम कहीं उस परदादा के परदादा के भूत तो नहीं हो न?''

रजनी कामत

"हाँ, हाँ, तुमने सही समझा। पालक, डरना मत। तुम्हें मैं बहुत चाहता हूँ। इसी वजह से तुम्हें वह सारी धन-राशि देने आया हूँ, जिसे मैंने अपने जीवन-काल में छिपा रखा था। उस गुप्त धन-राशि के बारे में व अपने बारे में बताऊँगा। सुनो।" बृद्ध ने यों कहा:

उस भूत का नाम प्रकाश था। वह पालक से भी बड़ा धनबान और कंजूस था। धन कमाना ही उसका एकमात्र लक्ष्य था। उसके बेटों या पोतों में से कोई भी उसके जैसा नहीं था। वे न ही कंजूस थे, न ही धन के पीछे पागल। यही चिंता उसे खाये जा रही थी। वे दयालु थे। मौक़ा मिला तो दान देने के लिए आगे आते थे। खुलकर पैसे खर्च करते थे। जब उसने देखा कि उसका कमाया हुआ पूरा धन बर्फ की तरह पिघल रहा है तो उसे बड़ा ही दुख हुआ।

खूब सोच-बिचार के बाद प्रकाश ने एक कठोर निर्णय लिया। उसने सबको घर से निकाल दिया। मरने के बाद भूत बनकर उस धन-राशि की रक्षा करने लगा। हाल ही में उसे पालक के बारे में मालूम हुआ। उसे लगा कि चूँकि पालक उसी का बारिस है तो यह धन-राशि उसके सुपुर्द क्यों न कर दिया जाए। इससे धन सुरक्षित रहेगा और साथ ही उसमें बृद्धि भी होगी।

पालक ने भूत का कहा ध्यान से सुना और बेहद खुश हुआ। भूत ने कहा, "देखो पालक, अपनी सारी आमदनी तुम्हें सौंपूगा, पर एक शर्त पर।"

पालक ने आतुरता-भरे स्वर में पूछा, "कहो, वह शर्त क्या है?" "अदृश्य रहकर मैं सदा तुम्हारे ही साथ रहूँगा। घर की पूरी जिम्मेदारी मुझे सौंपनी होगी। मैं जो कहूँगा, बही होगा।" भूत ने कहा।

धन के पिपासु पालक ने आगे-पीछे सोचे बिना भूत की शर्त को सहर्ष स्वीकार कर लिया। इसके बाद भूत प्रकाश ने पूरी धन-राशि पालक के सुपुर्द कर दी। अब पालक के घर की देखभाल की जिम्मेदारी भूत ने संभाली। उस क्षण से घर नरक बन गया। घर में पालक की माँ, उसकी पत्नी ब तीन बच्चों सहित कुल छे लोग रहते थे। उसकी शर्तों के अनुसार उनके भोजन के लिए जितना चाबल चाहिये, उसमें से चौथे भाग की बचत करनी थी। स्वादहीन आहार-पदार्थों व पानी जैसे पतले छाछ से पेट भरना था। त्योहारों

के दौरान पकवानों पर निषेध था।

पहले पालक इतनी कठोरता बरतता नहीं था। घर के लोगों की समझ में नहीं आया कि पालक इतना क्रूर क्यों बन गया। उसकी व्यवहार-शैली में अकस्मात् इतना परिवर्तन क्यों आया।

एक दिन पालक की दस साल की बेटी पार्वती अचानक बीमार पड़ गयी। ''पार्वती को बग़ल के गाँव के वैद्य के पास ले जाना है। क्या संदूक से थोड़ी-सी रक़म निकाल सकता हूँ?'' पालक ने भूत से दबे स्वर में पूछा।

''नहीं। बड़े कहते हैं कि उपवास परम औषध है। उपवास रखेगी तो बुखार आप ही आप घट जायेगा।'' भूत ने कड़े स्वर में कहा।

''घटने के आसार नहीं दीख रहे हैं। अगर कुछ हो गया तो,'' पालक ने दीन स्वर में कहा।

''ऐसा हुआ तो वह हमारे लिए लाभदायक ही है। आजकल लड़की की शादी करना कोई मामूली बात नहीं है। काफी धन खर्च करना पड़ता है। हम खर्च से बच जायेंगे।'' भूत ने ठठाकर हँसते हुए कहा।

भूत की ये बातें सुनकर पालक निश्चेष्ट रह गया।

बेटी की तबीयत के बारे में पति की उदासीनता को देखकर पालक की पत्नी लक्ष्मी एकदम नाराज़ हो उठी। उसने संदूक को खोलने के लिए एक चाभी ढूँढ़ निकाली। पति की ग़ैरहाजिरी में उसने संदूक से पैसे निकाले। बेटी की चिकित्सा करवायी। अब बेटी का बुखार कम होने लगा।

भूत को संदेह हुआ कि उसकी जानकारी के बिना घर में कोई गड़बड़ी हो रही है । तो एक दिन पालक के साथ गये बिना घर में ही रह गया। उसे मालूम हो गया कि घर में क्या हो रहा है।

पालक रात को जैसे ही घर लौटा, भूत ने छाती पीटते हुए कहा, ''अरे, देखो तो सही, संदूक में क्या बच गया?''

पालक ने संदूक खोला तो उसमें दो प्रकार के भस्म, लेह, कषाय की एक बोतल दिखायी पड़ी। इतने में वहाँ आयी पत्नी से उसने पूछा, ''यह सब क्या है?''

''हाँ, मैंने ही संदूक खोला, रक़म ली और बेटी का इलाज करवाया। ऐसा करके क्या मैंने कोई ग़लती की? जो धन बेटी के इलाज के लिए

भी उपयोग में नहीं आये उसकी हमें क्या ज़रूरत है? तुम्हारे लिए धन ही सब कुछ है तो कहो, खायेंगे-पीयेंगे नहीं, भूखा रहेंगे और हम सब एक साथ आत्महत्या कर लेंगे।'' पत्नी लक्ष्मी ने आँसू बहाते हुए कहा।

पालक कुछ कहे बिना वहाँ से चला गया। रात भर वह सो नहीं पाया। सबेरे-सबेरे उसने एक निर्णय लिया। संदूक खोलकर थोड़ी-सी रक़म पत्नी को देते हुए उसने कहा, ''मुझे माफ़ कर देना लक्ष्मी। समय पर इलाज करवाकर तुमने पार्वती बेटी को बचा लिया। इस रक़म से घर के लिए जो भी आवश्यक चीज़ें खरीदनी है, खरीदो। ख्याल रखना, बच्चों को कोई कमी महसूस न हो।''

भूत यह सब देख रहा था। वह पालक को पिछवाड़े में ले गया और क्रोध से कहा, ''अरे पालक, तुम अपने वचन से मुकर गये।''

''मैं व्यापारी हूँ। वचन से मुकरना भी आदत है,'' पालक ने निश्चिंत होकर कहा।

''मैं चाहता था कि पीढ़ियों दर पीढ़ियों तक हम संपन्न रहें। इसी को दृष्टि में रखकर मैंने यह सब कुछ किया। वचन नहीं निभाओगे तो तुम कहीं के न रहोगे।'' भूत ने कर्कश स्वर में कहा।

''इसका निर्णय तो समय ही करेगा। आख़िर संपन्नता हो किसलिए? उसका भोग न करके उसे संदूकों में बंद कर उस पर पहरा देने के लिए? अपनी बेटी के इलाज के लिए भी जिस धन का उपयोग न किया जाए तो वह धन क्यों और किस लिए? धन के मोह में आकर तुमने सब बंधुओं को दूर रखा। अमूल्य प्रेम और अनुराग से दूर होकर, मरने के बाद भी धन-पिपासु बनकर, भूत बनकर अशांत रह रहे हो। तुम्हारी इस दुर्गति व दुस्थिति को देखते हुए मैंने निर्णय कर लिया कि भविष्य में मेरी भी ऐसी दुर्गति न हो।'' पालक ने आवेश में आकर कहा।

''वाह पालक, वाह, तुमने मेरी आँखें खोल दीं। तुम्हारी बातें सौ फी सदी सच हैं। अपने परिवार की ही नहीं, अडोस-पडोस के लोगों की भी सहायता करते हुए सुखी जीवन बिताना।'' यह कहकर भूत ग़ायब हो गया और फिर कभी नहीं लौटा।

महान पुरुषों के जीवन की झाँकियाँ-७

एक अविश्वसनीय प्रदर्शन

छठा मुगल सम्राट औरंगजेब (१६५९-१७०७) शायद ही किसी का मित्र होगा। किन्तु कूटनीतिक कारणों से उसे भिन्न-भिन्न समय पर भिन्न-भिन्न राज्यों के राजकुमारों को बर्दाश्त करना पड़ता था और उनके साथ दोस्ती का बहाना बनाना पड़ता था।

राजस्थान के एक राज्य जोधपुर को वह हड़पना चाहता था। लेकिन वहाँ का शासक महाराजा यशवन्त सिंह उस पर भारी पड़ रहा था।

जब एक बार महाराजा अपने बेटे पृथ्वीसिंह के साथ अपने आगरा भ्रमण के दौरान शिष्टाचार वश मुगल सम्राट से मिलने गया, तब उसने

महाराजा को अपने बाग की अनेक शानदार चीजें दिखाईं। महाराजा ने उनकी तारीफ की। लेकिन जब औरंगजेब ने बाग के एक कोने में रखे एक बड़े पिंजड़े की ओर उन्हें ध्यान दिलाया तब महाराजा ने कोई रुचि नहीं दिखाई। सम्राट को इस पर बेहद आश्चर्य हुआ, क्योंकि पिंजड़े में उसकी एक बहुत ही महत्वपूर्ण सम्पति थी- एक विकराल हृष्ट-पुष्ट डरावना बाघ।

''महाराजा, क्या आपने ऐसा विशाल पशु देखा है? इसकी दहाड़ सुनकर बहादुर से बहादुर भी सिर पर पाँव रखकर भाग खड़े होंगे।'' मुगल सम्राट ने अपनी राय दी।

यशवन्त सिंह ने बाघ पर केवल एक सरसरी नज़र डाली और पूछा, ''आप कैसे बहादुर की बात कर रहे हैं, सम्राट? हमारे राज्य में ऐसे जानवरों से तो हमारे बच्चे खेला करते हैं!''

''हा हा!'' औरंगजेब ठठाकर हँसा।

''क्या आपको बिश्वास नहीं होता?'' महाराजा ने गंभीरता के साथ कहा।

''क्या आप खुद इसमें बिश्वास करते हैं? आपके धन्य जोधपुर का कोई लाल इसकी पूँछ भी छू ले तो क्या वह अपनी जान बचा पायेगा?'' उसने हँसी उड़ाते हुए पूछा।

''आपको अपने सन्देह के लिए धन्यवाद,'' महाराजा ने कहा। फिर उसने अपने युवा पुत्र पृथ्वीसिंह की ओर देखा।

राजकुमार पृथ्वीसिंह संकेत समझ गया। वह तुरन्त पिंजड़ा खोलकर उसमें घुस गया। क्रुध बाघ तुरन्त उस पर टूट पड़ा। राजकुमार ने उसके मुँह पर एक घूंसा मारा और बाघ चारों कोने चित्त जा गिरा। लेकिन यह आरम्भ मात्र था। अवाक् औरंगजेब विस्फारित नेत्रों से देखता रहा कि कैसे राजकुमार बाघ से तब तक लड़ा जब तक बाघ निष्प्राण होकर ढेर नहीं हो गया। वह शान से पिंजड़े से बाहर निकला हालांकि उसके शरीर पर लगे घावों से रक्त बह रहा था।

बादशाह को, बुरी तरह शर्मिन्दा होने पर भी, राजकुमार की, उसके साहस, बल, कौशल तथा पिता की आज्ञाकारिता के लिए, तारीफ करनी पड़ी। महाराजा अपने बेटे को चिकित्सा के लिए अपने खेमे में ले गया और वह शीघ्र ही चंगा हो गया।

लेकिन औरंगजेब अपने मान भंग से मुक्त न हो सका। उसने बाद में धोखे से राजकुमार की हत्या करवा दी। इसकी एक अलग कहानी है।

चन्दामामा प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता-४ के उत्तर :

१. सुनील 'राजा-चोर' बेताल कथाएँ- का अंश है।
२. विभीषण।
३. सन् १९८९ नवम्बर २०।
४ २७।
५ बिश्वासघात ।
६. ब्लादिमीर और बूढ़ी स्त्री ।

गुरु-भार

विश्वेश्वररायपुर एक बहुत बड़ा गाँव है। अब उस गाँव में भगवद् गीता सप्ताह मनाया जा रहा है। गाँव के सब लोग एक हफ्ते से त्रिपाठी के प्रवचन सुनते आ रहे हैं और भक्ति-सागर में डूब रहे हैं। अंतिम दिन त्रिपाठी ने लोगों को संबोधित करते हुए कहाः

"मेरे प्रिय जनो, भगवान ने मुझे इतना ही समय दिया। मुझे कहीं और इसी प्रकार के कार्यक्रम में उपस्थित होना है। मोक्ष प्राप्ति के लिए निरंतर प्रयत्न करते रहने पर ही, मानव-जन्म सार्थक होता है। इसके लिए मार्ग दिखलाने वाले एक सद्गुरु की नितांत आवश्यकता होती है। ऐसे गुरु देव समान होते हैं। मेरी हार्दिक इच्छा है कि आप सबको ऐसे सद्गुरु का अनुग्रह प्राप्त हो। अब मैं आपसे विदा लेता हूँ।"

गाँव के लोगों ने त्रिपाठी का सत्कार दिया, उन्हें अनेक भेंटें दीं और सहर्ष विदा किया।

मंगल और भवानी उस गाँव के भूस्वामी हैं। दोनों दोस्त हैं। दोनों ने त्रिपाठी के प्रवचनों को बड़े ही ध्यान से सुना। घर लौटते ही मंगल ने भावावेश में आकर भवानी से कहा, "त्रिपाठीजी महान पंडित हैं। जीवन परमार्थ पर बताया गया उनका प्रवचन सचमुच ही कितना अद्भुत है।"

"हाँ, हाँ, निस्संदेह ही वे सरस्वती पुत्र हैं।" भवानी ने कहा।

मंगल ने कहा, "जब से मैंने त्रिपाठी का प्रवचन सुना, तब से मेरे हृदय में अशांति घर कर गयी है। सद्गुरु को ढूँढ़ निकालना चाहता हूँ और उनके चरणों में अपना जीवन समर्पित करना चाहता हूँ। तुम कुछ समय तक मेरी खेती की जिम्मेदारी संभालना, मेरे घर की देखभाल करना। अगर तुम मान जाओगे तो मैं उस काम पर निकल पड़ूँगा। कहो, तुम्हें मंजूर है? मेरी यह सहायता करोगे?" मंगल ने पूछा।

जयप्रकाश

“तुम्हारी यह सहायता करने में मुझे कोई आपत्ति नहीं है। परंतु मेरी एक बात ध्यान से सुनो। गुरु योग्य हैं या नहीं, इसका निर्णय लेने का ज्ञान हो तो हमें गुरु की आवश्यकता ही क्यों हो ? सोच कर निर्णय लो।” भवानी ने कहा।

“खूब सोचने के बाद ही मैं इस निर्णय पर आया हूँ। सुना है कि प्रयाग के पास कोई एक महात्मा हैं, जो हवा में तैरते हैं, पानी पर चलते हैं और आग में से गुजरते हैं। दिन में भक्तों के साथ रहते हैं, उनकी इच्छाएँ पूरी करते हैं और रात में गायब होकर हिमालय पर्वतों में जाकर तपस्या करते हैं। मैं भी उनके साथ रहकर अपने जीवन को धन्य बनाना चाहता हूँ।” मंगल ने कहा।

मंगल के इरादे को भवानी ने बखूबी जान लिया। रोकने पर भी वह रुकनेवाला नहीं है, यह जानकर उसने कहा, “तुम निश्चिंत होकर जाओ। भगवान से प्रार्थना करता हूँ कि यथाशीघ्र तुम्हें वे सद्गुरु मिल जाएँ, तुम्हारा उद्धार हो।”

मंगल जब प्रयाग में नित्यानंद स्वामी के आश्रम में गया, तब वहाँ लोगों की बड़ी भीड़ थी। उस भीड़ को देखकर मंगल पुलकित हो उठा। शिष्यों ने उसके बारे में जानकारी प्राप्त कर स्वामीजी को सविस्तार बताया। मंगल शिष्यों सहित स्वामीजी के निजी कक्ष में पहुँचा।

स्वामीजी को देखते ही मंगल के मुँह से निकल पड़ा। “वाह, मुखमंडल पर कैसी तेजस्विता है, क्या दिव्य आभा है!” कहते हुए वह भक्तिपूर्वक स्वामीजी के पैरों पर गिर पड़ा।

“उठो मंगल, तुम कुछ भव बंधनों से बंधे हुए हो। इससे छुटकारा पाना चाहते हो तो तुम्हें कुछ समय तक तपस्या करनी होगी। इसके बाद, तुम जो पाना चाहते हो, पा सकते हो। हरि स्वामी ओम् तत्सत्।” यह कहकर उन्होंने मंगल को आशीर्वाद किया।

“आश्चर्य, आप सर्वज्ञ हैं। मेरे बारे में आपको सब कुछ ज्ञात हो गया। इस जन्म से मुझे मुक्ति प्रदान कीजिये।” मंगल ने बिनती की।

गुरु ने मुस्कुराते हुए कहा, “सब कुछ तेरे हाथों में है। देखो मंगल, तुम्हें अपने अन्दर वैराग्य को बढ़ाना है। लो यह प्रसाद और श्रद्धा-भक्ति के साथ इसे खाना।” कहते हुए स्वामीजी ने हवा में हाथ फैलाया।

देखते-देखते एक सीताफल उनके हाथों में
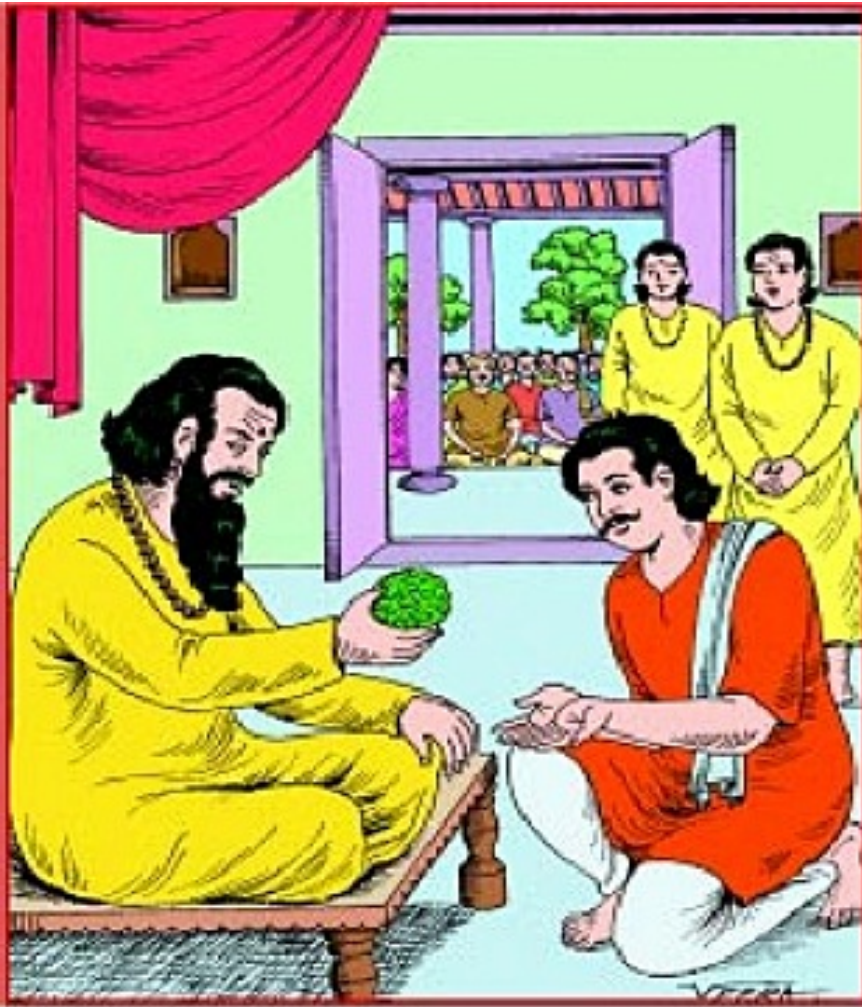
प्रकट हुआ। स्वामीजी ने उसे मंगल को दे दिया।

मंगल हक्का-बक्का रह गया। फल खाते हुए उसके हृदय में कितने ही संकल्प जाग उठे।

यों मंगल के घर छोड़े छः महीने बीत गये। उसके बारे में लोग तरह-तरह की टिप्पणियाँ करने लगे। कुछ लोगों ने कहा, ''वह हिमालय पर्वतों पर जाकर तपस्या कर रहा है।'' तो कुछ लोग कहते रहे, ''वह बैरागी बन गया।'' मंगल की पत्नी, बेटा और बेटी इन अफवाहों को सुन कर परेशान हो उठे। पर वे लाचार थे। भवानी ही उनका एकमात्र सहारा था। वही हर मुसीबत में उन्हें ढाढ़स बंधाता था और हर तरह से मदद कर रहा था।

एक दिन मंगल से दो ख़त मिले। एक ख़त उसकी पत्नी के नाम पर था, तो दूसरा भवानी के नाम पर : ''मैं श्री श्री श्री नित्यानंद आश्रम में रह रहा हूँ। परम पूज्य गुरुजी ने उपदेश दिया कि मैं भव बंधनों को तोड डालूँ और तुम सबसे दूर रहूँ। यहीं रहकर प्रशांत जीवन बिताने की मेरी इच्छा है। मेरी पत्नी और संतान को कोई कष्ट न हो, वे किसी प्रकार की कमी महसूस न करें, इसके लिए तीन एकड़ का खेत और घर उनके सुपुर्द करता हूँ। जो ज़मीन बच गयी, उसे और बगीचे को बेचूँगा और इसी आश्रम में स्थायी रूप से शेष जीवन बिताऊँगा। सही दाम पर उन्हें बेचने का प्रबंध किया जाए तो मैं आऊँगा, भूमि को बेचूँगा और रक़म लेकर लौटूँगा। इस विषय में कोई समझौता करने के लिए मैं कदापि तैयार नहीं हूँ। परंतु हाँ, गुरुजी कहें तो शायद मेरे इस निर्णय में परिवर्तन हो सकता है।''

पत्र पढ़ते ही मंगल की पत्नी और बच्चे हाहाकार करने लगे और दौड़ते हुए भवानी के घर गये।

भवानी ने उन्हें समझाया-बुझाया और कहा, ''मैं जैसा कहता हूँ, वैसा करना। तुम लोगों की समस्या का हल हो जायेगा।'' उन सबने मान लिया।

फिर वह, उन दोनों पत्रों को लेकर ग्रामाधिकारी के पास गया। इसके पहले ही वह मंगल के बारे में उसे बता चुका था। उन दोनों पत्रों को पढ़ने के बाद ग्रामाधिकारी ने, मंगल से विशद रूप से चर्चा की।

एक महीने के अंदर ही मंगल बेतहाशा गाँव

लौटा। वह सीधे ग्रामाधिकारी से जाकर मिला और कहने लगा, "महाशय, इतना घोर अन्याय! ऐसा मित्रद्रोह तो मैंने न सुना, न ही देखा। उसका बिश्वास करके मैंने अपनी जायदाद, अपने परिवार को उसके हवाले किया और भवानी ने मेरे साथ इतना बड़ा अन्याय किया! मेरी सारी जायदाद अपने नाम कर ली और मेरे परिवार के सदस्यों को घर से निकाल बाहर कर दिया! उन्हें दाने-दाने के लिए मुहताज बना डाला! तुरंत ग्राम सभा बुलवाइये, उसे बुलाइये और मेरे साथ न्याय कीजिये। उसे सज़ा दीजिये और मुझे व मेरे परिवार को बचा लीजिये।"

ग्रामाधिकारी ने मंगल की आँखों में आँखें डालते हुए कहा, "तुम्हारे साथ ऐसा क्या अन्याय हो गया? मंगल पर तुम्हारा अभियोग क्या है?"

"पहले ही मैं मंगल के मित्रद्रोह के बारे में बता चुका हूँ। गुरु की खोज करने के लिए निकलने के पहले मैंने मंगल से कहा था कि वह मेरी जायदाद और मेरे परिवार की देखभाल करे। अब उस धोखेबाज़ ने मेरी जायदाद अपने नाम कर ली। क्या इससे बड़ा अन्याय हो सकता है?" आवेश-भरे स्वर में मंगल ने कहा।

"वो तो ठीक है। इसपर अवश्य ही कार्रवाई करूँगा। परंतु यह बताना कि तुम्हारे गुरु ने क्या उपदेश दिया था?" ग्रामाधिकारी ने पूछा।

"भव बंधनों को पूर्ण रूप से तोड़कर आओगे तो तुम्हें मोक्ष का मार्ग दिखाऊँगा।" मंगल ने कहा।

"तुम्हारे वे भव बंधन क्या-क्या हैं?" ग्रामाधिकारी ने पूछा। "भव बंधन का मतलब है, पत्नी, संतान, बंधुगण, मित्र आदि को भुला देना, उन्हें त्यजकर चले आना।" मंगल ने कहा।

"तुमने अपने पत्रों में लिखा था कि तुममें बैराग्य घर कर गया है, भव बंधनों को तोड़ रहा हूँ आदि। तो फिर, "यह मेरा है, मुझे चाहिये," ये सब कहाँ से आ गये? इसलिए अपने गुरु के पास लौट जाना और भगवान की सेवा में मग्न हो जाना। इससे तुम्हें मोक्ष मिल जायेगा।" ग्रामाधिकारी ने व्यंग्य-भरे स्वर में कहा।

"मेरे गुरुजी ने बारंबार कहा था कि बिना काम पूरा हुए मत लौटना। जब तक मेरी जायदाद मुझे नहीं मिलेगी, तब तक यहाँ से नहीं हटूँगा।" मंगल ने दृढ़ स्वर में कहा।

इसपर ग्रामाधिकारी ठठाकर हँस पड़ा और बोला, ''भवानी के पास जो दस्तावेज़ हैं, वे साफ़-साफ़ बताते हैं कि यह जायदाद उसी की है। ठहरो, मैं उसे अभी यहाँ बुलाता हूँ।''

''वे सब नक़ली दस्तावेज़ होंगे।'' क्रोध-भरे स्वर में मंगल ने कहा।

''तुम तो कह रहे हो कि मुझे कुछ नहीं चाहिये। मुझे केवल मोक्ष चाहिये। तो क्यों झंझटों में फंसते हो?'' गंभीर स्वर में ग्रामाधिकारी ने कहा।

''मैंने थोड़े ही कहा, मुझे नहीं चाहिये। मुझे चाहिये, इसीलिए तो आया हूँ।'' मंगल ने सकपकाते हुए कहा।

''मंगल, क्या चाह लेकर आये हो? जायदाद और परिवार? या गुरु और उनका कहा मोक्ष? तुममें तो रत्ती भर भी वैराग्य नज़र नहीं आता।'' ग्रामाधिकारी ने कड़ुवे स्वर में कहा।

यह सुनते ही मंगल सोच में पड़ गया। ग्रामाधिकारी ने जो प्रश्न किया, उसमें निहित रहस्य उसकी समझ में आया। उसने हाथ जोड़ते हुए कहा, ''अब समझ गया हूँ कि मुझसे कितनी बड़ी ग़लती हो गयी। मुझे माफ़ कर दीजिये। मेरी आँखें खुल गयीं।'' कहते हुए वह ग्रामाधिकारी के पैरों पर गिर पड़ा।

ग्रामाधिकारी ने मंगल को प्यार से उठाते हुए कहा, ''तुम अपनी ग़लती समझ गये, इसपर मैं बहुत खुश हूँ। तुममें यह परिवर्तन ले आने के लिए ही मैंने और भवानी ने यह नाटक खेला। न ही तुम्हारे परिवार को कोई कष्ट पहुँचा है, न ही तुम्हारी जायदाद को। खुद देख लो।'' कहते हुए ग्रामाधिकारी उसे कमरे के अंदर ले गया। वहाँ भवानी और मंगल का परिवार बड़ी ही बैचेनी-से उसका इंतज़ार कर रहे थे।

मंगल को गले लगाते हुए भवानी ने क हा, ''तभी मैं तुमसे कहनेवाला था। लेकिन तुम सुनने की स्थिति में नहीं थे। इसीलिए चुप रह गया। गुरु तो वह होता है, जो तुम्हारी चाह पूरी करता है, तुमसे कुछ चाहनेवाला गुरु नहीं, भार होता है।''

मंगल ने शर्म के मारे सिर झुका लिया।

चन्दामामा प्रश्नावली-६

Co-sponsored by
Infosys FOUNDATION,
Bangalore

जो सही उत्तर देंगे, उनमें से एक को २५० रुपये दिये जायेंगे।*

*सही उत्तर देनेवाले एक से अगर अधिक हों तो पुरस्कार की रक़म ड्रा द्वारा निकाले गये सही उत्तर देनेवाले पाँच लोगों में समान रूप से बाँटी जायेगी।

इस प्रश्नावली में जो भी प्रश्न पूछे गये हैं, वे सबके सब जनवरी व दिसंबर २००५ के बीच में चन्दामामा के अंकों में प्रकाशित कहानियों व शीर्षकों में से लिये गये हैं, जिन्हें आप पढ़ चुके हैं। वे यदि याद हों तो इन सबके उत्तर आप तुरंत बता सकेंगे। यदि याद नहीं हों तो बारहों अंकों को सामने रख लें और पन्ने पलटें तो उन्हें आसानी से जान जायेंगे। अवश्य ही बड़ा मज़ा आयेगा।

<u>आपको यह करना है:</u> १. उत्तर लिखिये, २. अपना नाम और उम्र (१६ वर्ष की उम्र के अंदर होना आवश्यक है); पिनकोड सहित सही पता हो, ३. एक परिवार में सिर्फ एक ही सदस्य भाग लें, ४ अभिदाता हों तो वह संख्या लिखिये, ५. लिफ़ाफे पर **चन्दामामा प्रश्नावली-६** लिखें और उसे चन्दामामा के पूरे पते पर हमें भेजिये, ६. जुलाई महीने के अंत तक आपकी प्रविष्टि हमें मिल जानी चाहिये, ७. सितम्बर महीने के अंक में परिणाम प्रकाशित किये जायेंगे।

१. "बाघ की मूँछों के लिए, जिस अचंचल बिश्वास और दृढ़ निश्चय के साथ तुमने प्रयत्न किया, उसी प्रकार अब भी प्रयत्न करो। अवश्य ही विजय प्राप्त करोगे।" साधु की इस सलाह को आचरण में रखा और अपने पुत्र को प्रेम व आदर के साथ विद्याएँ सिखाईं, उसे सुयोग्य बनाया। ऐसा करनेवाले वे राजा कौन थे और किस कहानी में इन्हें पाते हैं?

२. दुनिया भर में अति प्राचीन तेल शुद्धीकरण केंद्र हमारे देश में कहाँ है?

३. अकबर जब सिंहासन पर आसीन हुए तब उनकी उम्र क्या थी?

४. दक्कन की पीठभूमि की सबसे लंबी नदी कौन-सी है?

५. विश्व आहार दिनोत्सव कब मनाते हैं?

६. ग़ज़ल का जन्मस्थान कौन-सा है?

७. सबसे पहली बार कांग्रेस अध्यक्ष के पद पर चुने जानेवाले मुसलमान कौन हैं ?

८. यह चित्र किस कहानी का है?
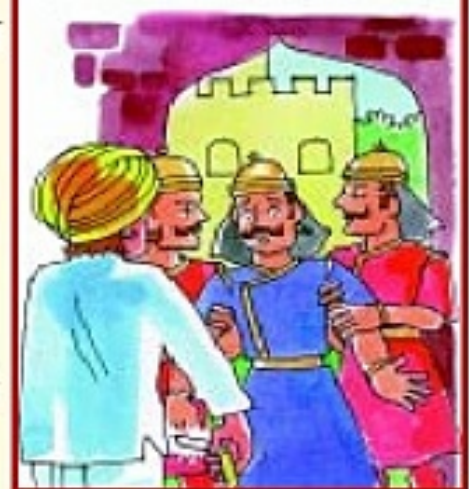
अमृत की खोज में

ब्रह्मदत्त जिस समय काशी राज्य पर शासन कर रहे थे, उस समय उनके सामंत राजा चिरायु के यहाँ नागार्जुन नाम से बोधिसत्व मुख्य मंत्री का भार संभालते थे।

नागार्जुन दयालु और दानी के रूप में लोकप्रिय थे। साथ ही रसायन शास्त्र और औषध विज्ञान के पारंगत विद्वान थे। उन्होंने एकरसायन-प्रयोग के द्वारा एक रहस्य-योग का आविष्कार किया और उसके जरिये राजा तथा अपने को भी बुढ़ापे और मरण से दूर रखा।

एक बार अचानक नागार्जुन का सबसे प्यारा पुत्र सोमदेव स्वर्गवासी हुआ, इस पर नागार्जुन को अपार दुख हुआ। नागार्जुन सहज ही दयालु थे। इसलिए वे सोचने लगे, 'आइंदा इस संसार में किसी की मृत्यु न हो! कोई भी मानव दुख का शिकार न बने, इस वास्ते कोई न कोई उपाय करना होगा।'

आख़िर नागार्जुन ने यह निश्चय किया, "रसायनों का प्रयोग अधिक खर्चीला है। इसलिए सर्व साधारण जनता के लिए भी खरीदने लायक़ जड़ी-बूटियों द्वारा अमृत तैयार करना होगा। तभी सभी लोग दुख-दर्द से दूर होकर सुखी रह सकते हैं।"

अपने इस निर्णय के अनुसार कई तरह की औषधियों के संयोग से नागार्जुन अमृत तैयार करने में लग गये। अपने सारे शास्त्र विज्ञान का उपयोग करके उन्होंने अनेक अनुसंधान किये। बहुत हद तक सारी प्रक्रियाएँ पूरी हो गईं। उनका अनुसंधान अब अंतिम चरण में पहुँचा। अब केवल अमृत-कल्प नामक जड़ी-बूटी को मिलाने से उनका प्रयोग संपूर्ण होनेवाला था।

इस बीच यह समाचार इंद्र के कानों तक पहुँचा। उसी वक्त देवराज इन्द्र ने अश्विनी देवताओं को बुलाकर आदेश दिया, "तुम लोग

तुरंत पृथ्वी लोक में चले जाओ और नागार्जुन के ''अमृत योग'' को पूर्ण होने से रोक दो। तुम लोग बिना संकोच उन पर साम, दाम, भेद और दण्डोपायों का प्रयोग करो। बाकी काम मैं देख लूँगा।''

अश्विनी देवता बेष बदल कर भूलोक में पहुँचे। नागार्जुन से मिलकर कुशल प्रश्न पूछे। तदनंतर बोले, ''मंत्रीवर, राज्यों के उलट-फेर करने की युक्तियाँ जाननेवाले आप महानुभाव से कोई बात छिपी नहीं है। लेकिन इस बक़्त आप ब्रह्मा के संकल्प को रोकने का साहस कर रहे हैं। मानव जाति की 'धर्म गति' बनी मृत्यु को आप 'अमृत सिद्धि' के द्वारा अवरुद्ध कर दें तो सृष्टि का शासन ही डगमगा जाएगा न? अगर मानव नहीं मरता है तो, उनके वास्ते कितने लोक चाहिए? अलावा इसके जो कार्य देवताओं के द्वारा संपन्न होना है, उसे मानव मात्र बने आप संपन्न करने का प्रयत्न करें तो क्या देवता और मानवों के बीच कोई अंतर रह जाएगा? आपका पुत्र भूलोक को भले ही त्याग चुका हो, पर वह स्वर्ग में सुखी है!''

इन बातों से नागार्जुन का मन संतुष्ट नहीं हुआ। वे इस विचार में डूब गये कि वह जो कार्य कर रहे हैं, वह उचित है या नहीं?

इसी बीच राजा चिरायु के पुत्र जयसेन का युवराजा के रूप में अभिषेक करने की तैयारियाँ पूरी हो गईं। एक शुभ मुहूर्त में सारा दरबार सभासदों से खचाखच भर गया।

इस बीच वृद्ध ब्राह्मण के रूप में पृथ्वी पर

पहुँचकर इन्द्र जयसेन के पास गये और गुप्त रूप से यों बोले, ''बेटा, क्या तुम यह बात नहीं जानते कि तुम्हारे पिता बुढ़ापे और मरण से परे हैं? इसलिए तुम्हें सदा के लिए युवराजा बनकर ही रहना पड़ेगा, लेकिन तुम्हें कभी राज्य प्राप्त न होगा!''

यह समाचार सुनकर जयसेन चिंता में डूब गया। इस पर वृद्ध ब्राह्मण ने समझाया, ''बेटा, इस बात को लेकर तुम चिंता न करो। तुम्हारी मनोकामना की पूर्ति के लिए एक सरल उपाय है। नागार्जुन का यह नियम है कि भोजन के पूर्व उससे जो कोई कुछ माँगे, उसे देने की उसकी परिपाटी है। कल तुम बक़्त पर पहुँचकर बिना झिझक के यह माँगो कि मुझे आपका सिर चाहिए। फिर देखा जाएगा कि क्या होता है?''

राज्य के लोभ में फंसे जयसेन ने भोजन के समय से पहले ही नागार्जुन के पास पहुँचकर वृद्ध के कहे अनुसार उनका सिर माँगा। इस पर नागार्जुन ने थोड़ा भी संकोच किये बिना अपनी तलवार जयसेन के हाथ देकर कहा, ''बेटा, डरो मत। मेरा सिर काट कर ले लो।''

पर रसायन के प्रभाव से नागार्जुन का सिर वज्र तुल्य हो गया था, इस कारण जयसेन के द्वारा कई बार काटने पर भी नागार्जुन का सिर नहीं कटा।

यह समाचार पाकर राजा वहाँ पर दौड़े आये, अपने पुत्र के इस कार्य पर दुखी हो उसे रोकना चाहा। तब नागार्जुन बोले, ''महाराज, युवराजा ने जो कामना व्यक्त की, उसके आगे-पीछे की बातें मैं अच्छी तरह से जानता हूँ। जयसेन सिर्फ़ निमित्त मात्र है। इसलिए मैंने उसको रोकना नहीं चाहा। पिछले जन्म में मैंने निनानवें दफ़े इनकार किये बिना अपना सिर काट कर दिया है। यह सौवीं दफ़ा है। इस बार पीछे हटने के अपयश से मुझे बचाने की जिम्मेबारी आपकी है!'' इन शब्दों के साथ भक्तिपूर्वक आख़िरी बार नागार्जुन ने राजा के साथ आलिंगन किया।

इसके बाद अपनी जड़ी-बूटियों वाली थैली में से एक जड़ी-बूटी निकाली, उसका रस निचोड़ दिया और उसे तलवार पर मलकर जयसेन से बोले, ''बेटा, अब मेरा सिर काट डालो!''

जयसेन ने ज्यों ही तलवार चलाई, त्यों ही गाजर-मूली की तरह नागार्जुन का सिर कट कर नीचे गिर पड़ा।

उस दृश्य को देख सहन न कर सकने के कारण राजा भी अपने प्राण त्याग करने को तैयार हो गये।

इस पर नीचे गिरे नागार्जुन के सिर से ये बातें सुनाई दीं, ''राजन, आप कृपया चिंता न करें! मैं अपने सभी जन्मों में आपके साथ रहूँगा।''

इसके बाद राजा पूर्ण रूप से विरागी बन गये। तत्काल ही वे अपने पुत्र का राज्याभिषेक करके तपस्या करने जंगलों में चले गये।

इस प्रकार जयसेन को राज्य प्राप्त हुआ और इन्द्र का व्यूह भी सफल हुआ।

रामायण

"राम को वन भेजकर भरत का राज्याभिषेक करने का मार्ग मैं बताती हूँ, सुनिये। जो मैं कहूँ, वैसा ही कीजिये। एक बार देवासुर युद्ध में आपके पति इन्द्र की सहायता करने गये। उनके साथ आप भी गईं। दण्डकारण्य में मत्स्यध्वज के राज्य में वैजयन्त के पास शम्बर नामक बलशाली असुर से लड़ते लड़ते आपके पति घायल हुए और मूर्छित हो गये। तब आप उनको युद्ध भूमि से दूर ले गईं और आपने उनके प्राण की रक्षा की। होश आने पर आपकी सेवा से सन्तुष्ट होकर उन्होंने दो वर देने चाहे। आपने कहा कि बाद में माँग लूँगी। देखिये, अब दोनों वर माँगने का समय आ गया है। इस अवसर को हाथ से जाने न दीजिये। राम को चौदह वर्ष का वनवास और भरत का राज्याभिषेक करने के लिए पति से अब दो वर माँगिये।" मन्थरा ने कैकेयी को बताया।

कैकेयी वस्तुतः अच्छे स्वभाव की थी। परन्तु मन्थरा के कहने सुनने पर उसका मन बुरी बातें सोचने लगा। वह राम को बहुत प्यार करती थी और वह कल्पना भी नहीं कर सकती थी कि राम के लिए वह ऐसा अशुभ सोचेगी। लेकिन मन्थरा ने उसके मन में एक बुरा ख्याल ही न डाल दिया था, बल्कि उसे पूरा करने के लिए तरीका भी बता दिया था।

कैकेयी ने मन्थरा से कहा, "अरे कुबड़ी, तू सचमुच अक्लवाली है। जिस प्रकार तुम मेरा हित चाहती हो और कोई नहीं चाहता।" उसने कुबड़ी की सलाह पर अपने सब गहने निकाल दिये। फटी साड़ी पहिनकर कोपगृह में चली गयी और फर्श पर लेट गई।
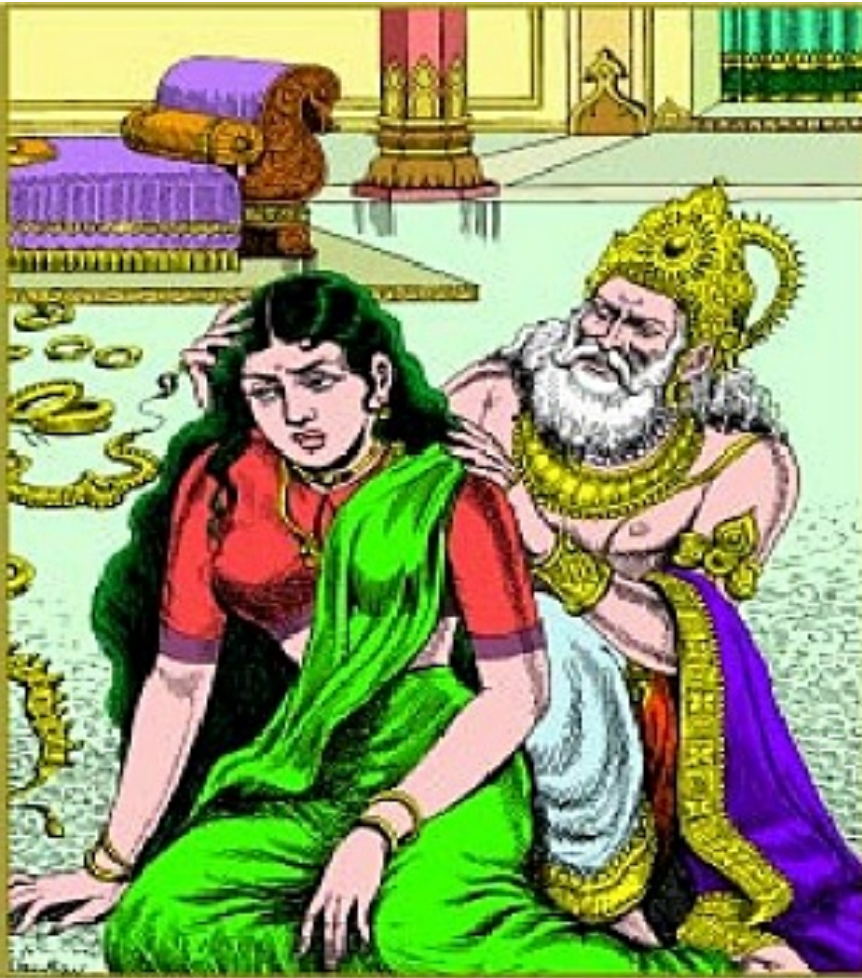
"जब आपके पति आपको देखने आयें तो आप बिना रुके रोते जाइये। राजा न आपका क्रोध, न शोक ही सह सकते हैं। उनको दूर करने के लिए वे अपने प्राण तक दे देंगे। जब तक वे आपके दोनों वर न दे दें, तब तक आप टस से मस न होना। कहेंगे कि हीरा मोती दूँगा। आप कहना कि नहीं चाहिए। सोच लीजिये, जब भरत चौदह साल राज्य कर लेंगे, उन्हें कोई भी सिंहासनसे न हटा सकेगा।'' मन्थरा ने कहा।

"उस शम्बर असुर से भी तुम अधिक चालाक हो।'' कैकेयी ने मन्थरा की प्रशंसा की। उसने यहाँ तक निश्चय कर लिया कि यदि पति ने वर न दिये तो आत्महत्या तक कर लूँगी।

दशरथ राम के पट्टाभिषेक की आज्ञा देकर, कैकेयी को स्वयं यह शुभ वार्ता देने के लिए उसके शयनकक्ष में गये। वहाँ उसको न देख चकित हो, वे चिल्लाये– "कैकेयी तुम कहाँ हो?'' जवाब नहीं मिला। फिर अन्तःपुर के द्वार के पास आकर द्वारपालिका से पूछा, "कैकेयी कहाँ है?''

"द्वारपालिका ने हाथ जोड़कर कहा, "प्रभु, वे कोपगृह में हैं।''

दशरथ घबरा गये। वह कोपगृह में गये। वहाँ कैकेयी को फर्श पर पड़ा देखा। लाखों करोड़ों के मूल्यवान मोती के हार और आभूषण फर्श पर इस तरह बिखरे हुए थे, जिस तरह तारे आकाश में बिखरे हुए होते हैं।

दशरथ ने बड़े प्रेम से कैकेयी के पास आकर पूछा, "किस बात पर तुम्हें गुस्सा आ गया है? किस पर? क्या किसी ने तुम्हें डाँटा है? अपमान किया है? क्या स्वास्थ्य ठीक नहीं है? वैद्यों को बुलवाऊँ? क्यों रो रही हो? जिसे तुम चाहोगी, उसे दण्ड दूँगा। चाहे वे निरपराधी ही हों। तुम्हारे लिए किसी भी दरिद्र को धनी बना दूँगा। जब सब तुम से विनय का बर्ताव करते हैं, तब तुम किस बात का दुःख कर रही हो? बताओ, तुम्हारी इच्छा क्या है? मैं अपने प्राण देकर भी तुम्हारी इच्छा पूरी करूँगा। उठो, कैकेयी।''

यह सुन कैकेयी ने कहा, "मेरा किसी ने कोई अपकार नहीं किया है। अपमान भी नहीं किया। मेरी एक इच्छा है। यदि उसे पूरा करने की प्रतिज्ञा करेंगे तो बताऊँगी।''

दशरथ यह सुनकर मुस्कुराये। कैकेयी की वेणी हाथ में पकड़कर, प्राण समान राम की शपथ

लेकर, उन्होंने कैकेयी की इच्छा पूरी करने का वचन दिया।

तब कैकेयी ने दशरथ को शम्बर के युद्ध के और उसमें उनके मूर्छित होने के और उस समय उनको दूर ले जाकर सेवा-शुश्रूषा करने के बारे में बताया और याद दिलाया कि उस समय उन्होंने दो वर माँगने के लिए कहा था, पर उसने कहा था कि बाद में मागूँगी। फिर उसने दोनों बर इस प्रकार बतायेः राम का पट्टाभिषेक न होकर, भरत का हो। राम बल्कल वस्त्र पहनकर, जटा बढ़ाकर, मुनि वेश में चौदह वर्ष वन में काटे।

ये बातें सुनते ही दशरथ घबरा उठे। वह मूर्छित हो गये। हाथ पैर हिलने लगे। वह आहें भरने लगे। उन्होंने कैकेयी को डाँटा-फटकारा।

"यह सोच कि तू राजकुमारी है, लाकर मैंने घर में रखा। पर तुम तो जहरीली नागिन हो। तुम्हें वह माँ मानता है, फिर उसके साथ तुम ऐसा बर्ताब क्यों कर रही हो? मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है? वह कौशल्या से भी अधिक तुमसे प्यार और तुम्हारा सम्मान करता है। तुम भी उसे अपने पुत्र भरत से अधिक चाहती हो। फिर भी, राम के लिए क्यों तुम ऐसे कठोर बचन कहती हो? अचानक तुम्हें क्या हो गया? मैं तो यह सोच रहा था कि राम के राज्याभिषेक से कौशल्या से भी अधिक तुम्हें प्रसन्नता होगी। उसने ऐसा कौन-सा पाप किया है कि मैं उसे बन में भेजूँ। मैं अपने प्राण त्याग सकता हूँ, पर राम को बिना देखे नहीं रह सकता। तुम यह जिद छोड़ दो। मैं तुम्हारे पाँव पड़ता हूँ। तुम ये वर न माँगो। शायद तुमने यह जानने के लिए कि मुझे भरत पर प्रेम है कि नहीं, यह बर माँगा है। राम ने जो सेवा तुम्हारी की है, उसका चौथा हिस्सा भी भरत ने नहीं किया है। यदि तू कहे कि राम की अपेक्षा भरत तुम्हें अधिक प्रिय है, तो मुझे विश्वास न होगा। तुम्हारी बातों से मुझे बड़ी पीड़ा हो रही है। देखो, मैं बूढ़ा हूँ। कभी भी जा सकता हूँ। चाहो तो सारा संसार ले लो, पर राम पर क्रोध न करो। तुम्हें नमस्कार!" दशरथ बहुत देर तक कैकेयी को समझाते रहे।
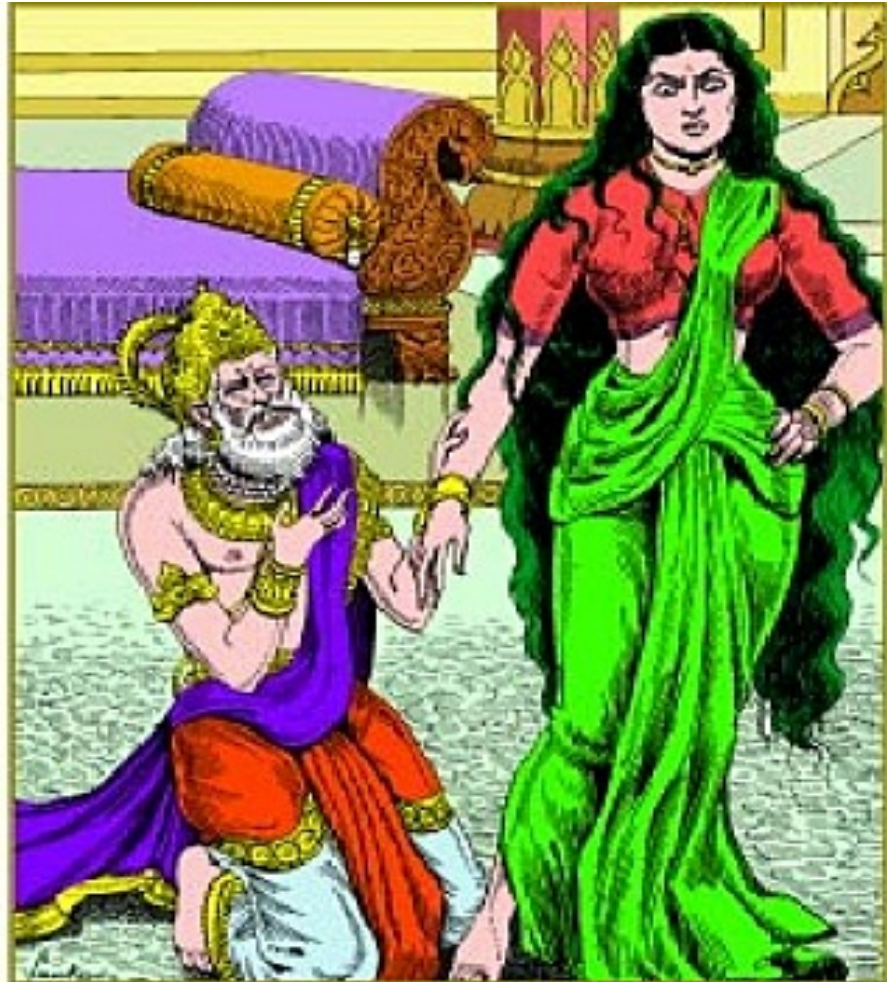
जैसे-जैसे दशरथ गिड़गिड़ाता जाता था, वैसे-वैसे कैकेयी का क्रोध बढ़ता जाता था। पहले वर देने को कहकर, फिर इच्छा पूरी करने का वचन देकर अब मुकर जाना, कैकेयी ने कहा, राजवंश पर कलंक है। उसने कहा कि वह बर

वापस न लेगी और यदि राम का पट्टाभिषेक हुआ तो वह आत्महत्या कर लेगी।

दशरथ मानसिक व्यथा से दग्ध हो उठे। कितनी बिषम परिस्थिति थी! ''बेटा, बन में जाकर रहो।'' कैसे राम से यह कहा जाये? यदि कैकेयी की इच्छा के अनुसार राम का पट्टाभिषेक छोड़ दिया गया तो और राजा क्या कहेंगे?

''पट्टाभिषेक आपने खूब किया।'' क्या बे परिहास न करेंगे? कौशल्या का मुँह कैसे देखूँगा। वह मन ही मन दुखी होने लगे। कैकेयी को खूब फटकारा। उसे मनाया। बीच-बीच में मूर्छित हो गये। फिर होश में आने पर बड़बड़ाने लगे। कहने लगे, ''यह तुमने क्या किया कैकेयी? क्या ऐसे ही दुर्भाग्य पूर्ण दिन देखने के लिए तुम्हें यहाँ लाया था! इस आनन्दोत्सव में तुमने कैसा विष घोल दिया। यह खबर फैलते ही खुशी में झूमती सारी अयोध्या नगरी में मातम छा जायेगा। हाय! मैं किसी को मुँह दिखाने लायक न रहा! किसमनहूस घड़ी में मैंने तुम्हें दो वर देने का वचन दे डाला। क्या मालूम था ये वचन न सिर्फ मेरे काल बन जायेंगे बल्कि सारी अयोध्या को शोक सागर में डुबा देंगे।'' वह रात प्रलय रात्रि की तरह उन्होंने काटी।

बसिष्ठ अपने शिष्यों के साथ राजमहल में आये। अन्त:पुर के द्वार पर उनको सुमन्त्र दिखाई दिया। बसिष्ठ ने कहा कि पट्टाभिषेक की सब तैयारियाँ पूरी हो गई हैं। अब बस राजा के आने की ही देरी है। यह बताने के लिए सुमन्त्र अन्त:पुर में गया। सुमन्त्र बृद्ध था। महाराजा का बालमित्र था। इसलिए किसी ने उसको रोका नहीं।

वह सीधे राजा के पास गया। वह राजा की मानसिक स्थिति का अनुमान न कर सका। उसने सोचा कि वे सो रहे हैं। उसने कहा, ''महाराज, उठिये। सूर्योदय हो गया है। राम का पट्टाभिषेक करने के लिए सब आपकी प्रतीक्षा कर रहे हैं।''

दशरथ की आँखें शोक के कारण लाल हो रही थीं। उसने सुमन्त्र को देखकर कहा, ''अरे भाई, मुझे क्यों इन बातों से सताते हो?'' यह जानते ही कि दशरथ दु:खी हैं, सुमन्त्र हाथ जोड़कर दो कदम पीछे हट गया।

वह राजा को दुखी और शोकाकुल अवस्था में देखकर चकित था। ऐसे आनन्द के अवसर पर उनके दुख का कारण क्या हो सकता है?

कैकेयी की गंभीर मुखाकृति को देखकर चकित होने के साथ सुमन्त्र चिन्तित भी हो गया।

दशरथ चूँकि सुमन्त्र से बात करने की स्थिति में न थे, इसलिए कैकयी ने कहा, ''सुमन्त्र, रात भर महाराजा को इस खुशी में नींद न आयी कि सबेरे राम का पट्टाभिषेक होगा। अभी-अभी ही सोये हैं। तुम जाकर राम को बुला लाओ। यही राजा की आज्ञा समझो।''

'राम शायद यहाँ आकर अपना पट्टाभिषेक करेंगे?' सोचता सुमन्त्र वहाँ से चला गया। नगर में उत्सव का कोलाहल हो रहा था। राजमहल लोगों से ठसाठस भरा था। सब तैयारियाँ हो गई थीं। अनेक निमंत्रित राजा भेंट उपहार लाये थे। वे सोच रहे थे, 'महाराजा दशरथ कहीं नहीं दिखाई दे रहे हैं। उनको कैसे बताया जाये कि हम आ गये हैं।'

सुमन्त्र ने उनसे कहा, ''मैं महाराजा से कह दूँगा कि आप सब यहाँ उपस्थित हैं। उनके पास राम को ले जा रहा हूँ।''

वह फिर दशरथ के अन्तःपुर में वापस गया। दशरथ के पास जाकर उसने कहा, ''दशरथ महाराज, विजयी भव! रात बीत गई है, प्रातःकाल हो गया है, सूर्योदय भी हो चुका है। आपके लिए ब्राह्मण, सेनापति, नगर के प्रतिष्ठित लोग प्रतीक्षा कर रहे हैं। उठिये और जो कुछ करवाना है वह करवाइये।''

''राम को लाने के लिए तुमको कैकेयी ने कहा था न? उसको बिना लाये तुम क्यों आये? क्या

उसकी आज्ञा मेरी आज्ञा नहीं है? मैं सो नहीं रहा हूँ। जाग रहा हूँ। जल्दी राम को बुलाकर लाओ।'' दशरथ ने कहा।

सुमन्त्र ने राजा को नमस्कार करके कहा, ''कोई बड़ी व्यवस्था की जाती मालूम होती है।'' वह मन ही मन खुश होता, लोगों को सड़कों पर देखता राम के महल की ओर गया। वहाँ लोगों के झुण्ड के झुण्ड जमा हुए थे। राम के अन्तःपुर के चारों ओर हाथी, घोड़े, सैनिक, मन्त्री वगैरह खड़े थे। सुमन्त्र उन सब को हटाता राम के सत मँजिले महल में गया। उसने राम के पास अपने आगमन की सूचना दी और उनकी अनुमति पाकर उनके पास गया।

राम अलंकृत होकर सोने की पीठिका पर बैठे थे। सीता पास में खड़ी हो उनपर चामर झल रही थीं। सुमन्त्र उनके पास गया। नमस्कार करके कहा, ''आपके पिता जी कैकेयी के अन्तःपुर में हैं। वे आपको देखना चाहते हैं।''

यह सुन राम फूले न समाये। उन्होंने सीता को अन्दर भेजकर पट्टाभिषेक के लिए जो-जो अलंकार पहने थे, उनके साथ ही निकल पड़े। वह शेर के चमड़े से अलंकृत रथ पर सवार हुए ही थे कि लक्ष्मण भी पीछे आकर बैठ गये। वह एक हाथ से भाई का छत्र पकड़कर दूसरे हाथ से चामर करने लगे। राम के पीछे घुड़सवार और हाथियों पर सवार होकर हज़ारों का जुलूस निकल पड़ा। रास्ते में भीड़ ही भीड़ थी। सब ने सोचा, 'वे हैं राम, आज ही पट्टाभिषेक होगा।'

राम का रथ दशरथ के महल के पास पहुँचा। तीनों प्राकार पार करके खड़ा हो गया। जो लोग उनके पीछे आये थे, वे भी वहीं खड़े हो गये। राम पैदल ही दो और प्राकार पार करके दशरथ के अन्तःपुर में गये।

एक सुन्दर आसन पर दशरथ और कैकेयी बैठे हुए थे।

राम ने पिता की और कैकेयी की चरण धूलि ली। ''राम...'' दशरथ ने कुछ कहना चाहा। पर उनका गला रुंध गया। आँखें मुँद गईं। और आँसू बहने लगे। वे कुछ और सहसा न कह सके। उन्होंने मुँह मोड़ लिया।

विरूप का विवाह

एक गाँव में ब्रजभूषण नामक एक जमींदार था। उसके विरूप नामक बिवाह योग्य एक पुत्र था। वह रात में अपने पिछवाड़े के पीपल के नीचे सोया करता था। सवेरे जागते ही पेड़ पर के पक्षियों को देख प्रसन्न हो उठता था।

एक दिन सवेरे विरूप ने जागते ही पेड़ की ओर देखा और चीख़कर बेहोश हो गया। बेटे की चीख सुनकर ब्रजभूषण घटना स्थल पर पहुँचा, अचेत पड़े अपने पुत्र को नौकरों के द्वारा घर के भीतर पहुँचा दिया।

थोड़ी देर में विरूप होश में तो आया लेकिन वह पागल की तरह देख अंट-संट बकने लगा। विरूप की इस हालत पर ब्रजभूषण के घबराने का एक और कारण भी था। क्योंकि उसी दिन विरूप की शादी तय करने कन्या पक्ष के लोग आनेवाले थे।

ब्रजभूषण ने कन्या पक्षवालों के पास ख़बर भेजी कि वे एक हफ़्ते के बाद आवें। तब पड़ोसी वैद्य माधवाचार्य को बुला भेजा।

माधवाचार्य ने विरूप की जांच करके कहा, ''वैसे लड़का बीमार नहीं है। शायद किसी पिशाचिनी ने इसे ग्रस लिया है। या किसी भूत-प्रेत से डर गया होगा! हमारे मठ में कोई साधु आये हुए हैं। उन्हें एक बार दिखला देंगे।''

इसके बाद लड़के को लेकर दोनों मठ में पहुँचे। उस बक़्त एक व्यक्ति साधु के चारों तरफ़ चक्कर काट रहा था। कहा गया कि उसे भूत ने ग्रस लिया है। साधु ने अपने हाथ की छड़ी से उस व्यक्ति के सर पर तीन बार प्रहार किया। उसका भूत उतर गया। ब्रजभूषण का विश्वास साधु पर जम गया।

साधु ने सारी बातें सुनीं, तब कहा, ''तुम्हारे पुत्र के अन्दर किसी भूत-प्रेत ने प्रवेश नहीं किया है। किसी दुश्मन ने इस पर मंत्र फुँकवा दिया है।

कोई मांत्रिक ही यह काम कर सकता है। बताओ, तुम्हारे गाँव में कितने मांत्रिक हैं?''

''हमारे गाँव में दो ही मांत्रिक हैं- शरभ और सांबु!'' ब्रजभूषण ने कहा।

''उनमें से किसी ने यह काम किया होगा। तुम उन दोनों के पास जाकर पूछो कि वे तुम्हारे पुत्र का इलाज़ करें। जो मांत्रिक इसका इलाज़ करने को तैयार होगा, तुम लौटकर उसका नाम मुझे बतला दो।'' साधु ने कहा।

ब्रजभूषण और माधवाचार्य ने घर लौटकर दोनों भूतवैद्यों को, जो मांत्रिक थे, बुला भेजा। शरभ ने विरूप की जांच करके इलाज करने से मना कर दिया और चला गया। सांबु ने कहा, ''मैं इसका इलाज़ करूँगा। आज रात को अंजन लगाकर मैं पता लगाऊँगा कि यह किसकी करतूत है? शरभ पैसे के पीछे पागल रहता है। मेरा संदेह है कि यह काम उसी ने किया है। इसलिए वह यहाँ से चुपके से खिसक गया है। मैं उसकी पोल खोल दूँगा।''

दोनों मांत्रिकों के बीच दुश्मनी थी। इसके बाद ब्रजभूषण ने सांबु को भेज दिया और साधु के यहाँ जाकर बताया कि सांबु न केवल इलाज़ करने के लिए तैयार हो गया है, बल्कि उसका अनुमान है कि यह शरभ की करतूत है।

साधु ने कहा, ''तुम भी शरभ पर शंका करते हो? लेकिन मैंने अपनी दिव्य दृष्टि से देखा है, यह करतूत सांबु की है। आज रात को वह अंजन लगाने के बहाने से तुम्हारे पुत्र के प्राण लेने का प्रयत्न करेगा। तुम मेरी बात मानकर अपने पुत्र की रक्षा कर लो।''

इसके बाद साधु ने ब्रजभूषण को बताया कि इसके वास्ते उसे क्या करना होगा। उस दिन रात को ब्रजभूषण तथा माधवाचार्य दो और आदमियों को साथ ले सांबु के घर की ओर चल पड़े और समीप में आड़ में छिपकर बैठ गये।

आधी रात के बाद सांबु ने अपने घर के मध्य रंगोली सजाई, रंगोली के बीच मरे हुए साँप को रखा। उस पर एक कपाल रख दिया, कपाल पर एक नींबू को खड़ा किया। इसके बाद धूप जलाया। तब अपनी एक उंगली काटकर उसके रक्त से कपाल पर तिलक लगााया।

इस क्रिया के बाद सांबु रंगोली के सामने बैठने ही वाला था, तभी चारों लोग सांबु के घर में घुस पड़े। उसको खंभे से बांधकर खूब पीटा, तब उसे

घसीटकर साधु के पास ले आये।

सबने सांबु पर जोर डाला कि वह अपनी गलती को स्वीकार कर ले, पर सांबु ने रोते-पीटते हुए कहा, ''महानुभाव, मैं भगवान की क़सम खाकर कहता हूँ कि मैंने कोई मंत्र नहीं फूँका है। मैं यह भी नहीं जानता कि किस दुष्ट ने यह अनर्थ किया है। इसी का पता लगाने के लिए मैं अंजन लगाकर देखनेवाला था, तभी ये लोग मुझे घसीट लाये।''

तभी विरूप को साथ लेकर शरभ वहाँ पहुँचा और गरजकर बोला, ''तुम लोग सांबु को पीटना बंद कर दो। वास्तव में मंत्र फूँकनेवाले साधु के वेश में आये पडोसी गाँव के इस मांत्रिक को पीटो। इसीने दुष्टता की, उलटे मुझे तथा सांबु को बदनाम करना चाहा। मुझे पहले से ही इस पर शक था।''

ये बातें सुनने पर साधु चुपके से खिसकने को हुआ। लेकिन शरभ और विरूप ने उसे पकड़कर उसकी ख़ूब मरम्मत कर दी।

वह चीख़ते हुए बोला, ''भाइयो, मैंने लालच में पड़कर यह करतूत की है। मगर मुझसे दुष्ट कार्य करानेवाला बदमाश यहीं पर है।'' फिर उसने माधवाचार्य की ओर संकेत किया। माधवाचार्य का चेहरा स्याह पड़ गया।

ब्रजभूषण ने उस पर थूककर कहा, ''तो यह करतूत तुम्हारी है? तुम ने यह काम क्यों कराया?''

इसका उत्तर विरूप ने यों दिया,''माधवाचार्य की कंजूसी से सभी लोग परिचित हैं। इसने अपनी इकलौती बेटी का ब्याह मेरे साथ करना चाहा। इसलिए एक पैसा भी ख़र्च किये बिना मुझे अपना दामाद बनाने के लिए इसने साधु के द्वारा यह प्रयोग कराया है। मैं पागल कहा जाऊँगा तो कोई भी अपनी कन्या देने आगे न आयेगा। इसलिए मेरे साथ अपनी लड़की का ब्याह रचकर फिर मुझे सामान्य बनाने के विचार से इसने यह करतूत की है। पेड़ पर एक भयंकर आकृति को देखकर मेरा मतिभ्रम हो गया था। शरभ की कृपा से मैं फिर से सामान्य बन गया हूँ।''

माधवाचार्य अपनी करनी पर लज्जित हो उठा। इस अपमान से माधवाचार्य की अक्ल ठिकाने लग गई। उसने काफ़ी धन ख़र्च करके अपनी पुत्री का विवाह विरूप के साथ ही कर दिया।
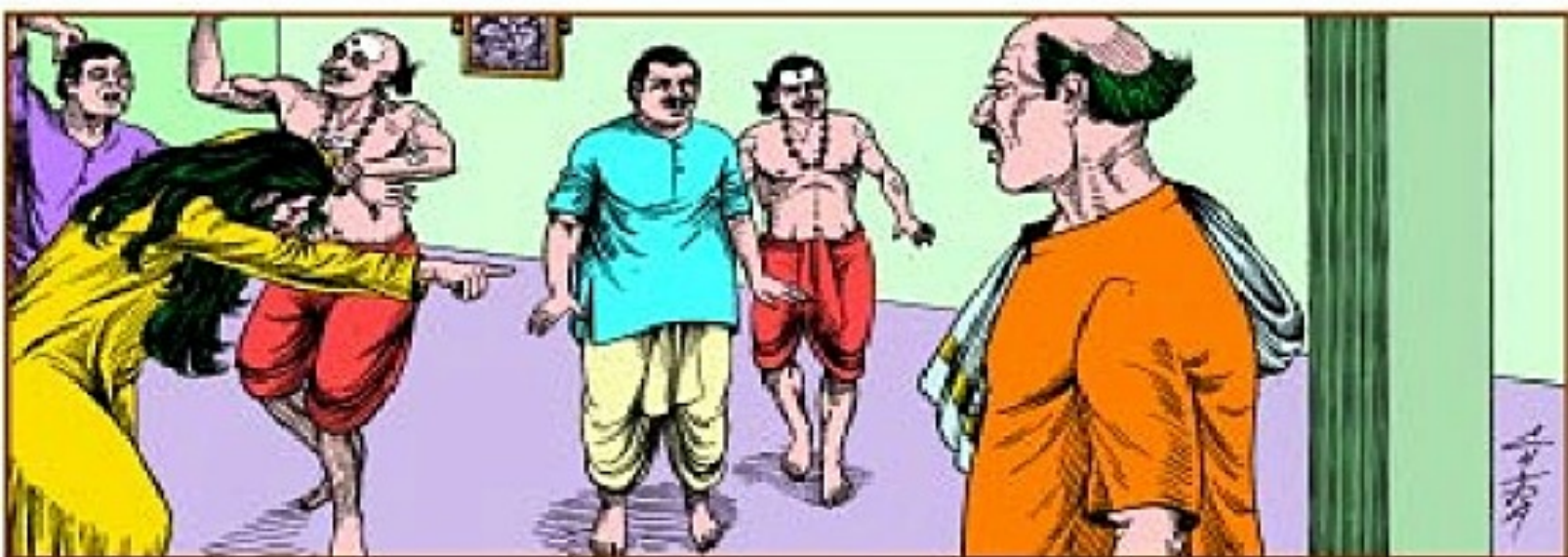
अगर वह होता तो...

रंगा और गंगा दोनों अच्छे दोस्त थे । लेकिन उन दोनों में बुरी लत यह थी कि जब देखो, मटरगस्ती करते रहते थे। एक दिन वे दोनों एक घायल व्यक्ति को उठाकर वैद्य के पास ले आये। वैद्य ने उसके घाव को साफ़ किया, मरहमपट्टी की और उसकी नब्ज की जाँच की। थोडी देर बाद वैद्य ने उन दोनों से पूछा, ''इन्हें चोट कैसे पहुँची?''

''दो भेड़ आपस में एक-दूसरे से भिड़ रहे थे। मैंने ज़ोर देकर कहा लाल भेड़ा ही जीतेगा, पर इसका दावा था कि काले भेड़े की ही जीत होगी। इस तरह मेरे और गंगा की बात बढ़ती गयी और अन्त में हम दोनों एक दूसरे को मारने के लिए भी तैयार हो गये। उस समय ये सज्जन रास्ते से गुज़र रहे थे। उन्होंने हमें लड़ते देखकर हम दोनों को अलग किया और हम दोनों के बीच में खड़े हो गये। मैंने गंगा को मारने के लिए उस पर पत्थर फेंका, पर वह पत्थर इस सज्जन के सिर पर लगा और ये घायल हो गये।'' रंगा ने कहा।

गंगा ने बड़े ही आतुरता-भरे स्वर में पूछा, ''कहीं इनके दिमाग़ को चोट तो नहीं लगी?''

''घबराने की कोई बात नहीं। अगर वह होता तो तुम दोनों के बीच में भला ये आते ही क्यों? ज़रा सी चोट लगी है । लहू देखकर बेचारे बेहोश हो गये। कुछ क्षण में वे ठीक हो जायेंगे।'' वैद्य ने मुस्कुराते हुए कहा।

-पद्मनाथ

6

चित्रः गाँधी अय्या

अपराजेय गरुड़

आदित्य राम सिंह को बचाने में स्वयं खतरे में पड़ जाता है पर राम सिंह उसे बचा लेता है। राजा महेन्द्रवर्मा राम सिंह को खास जिम्मेदारियाँ सौंपकर हलका महसूस करता है। राज्य के सरहद पर घूमते हुए चार आदिवासी पकड़े गये। आदित्य द्वारा राज्याभिषेक समारोह तक उन्हें हिरासत में भेज दिया जाता है।

राम सिंह अंगरक्षकों के कमान के साथ आदित्य के आवास में आता है।

महानुभाव, कमान को कुछ कहना है।

हमारी सरहदों पर से यह शिकायत आती है कि अपने घरों से युवक लापता हो रहे हैं।

इसमें खास बात क्या है?

वे एक के बाद एक लापता हो रहे हैं।

मैं खुद इसका पता करने चल जाता...

लेकिन राजा को आप की जरूरत होगी...

... राज्याभिषेक में आनेवाले अतिथियों के स्वागत के लिए। हम अपना ध्यान किसी और दिशा की ओर नहीं हटा सकते।

सरहदें पूरी तरह सुरक्षित हैं, महानुभाव।

सैनिकों को कहो कि वे बाहर जानेवालों पर भी नज़र रखें।

हाँ, राम सिंह, अभी केवल वे अन्दर आनेवालों को रोक रहे हैं।

मैंने मानव-बलि जैसी कुछ खबर सुनी थी....
...लेकिन मैंने सोचा कि गुफा मन्दिर के खत्म हो जाने के बाद वह समाप्त हो गया होगा। फिर भी, हमें सतर्क रहना चाहिये। राम सिंह, मुझे कल सुबह के अनुष्ठान के लिए तैयार होना है।
रवीन्द्रदेव आप्तपुरुष को अपने पिता के साथ पर्वत की गुफा में देखता है।
वे आदिवासी जो चन्द्रपुरी भेजे गये थे वापस नहीं आये। मैं चिन्तित हूँ।
हमें उनकी चिन्ता नहीं करनी चाहिये। यज्ञ को जारी रहने दें और चमत्कार घटने की प्रतीक्षा करें।
यह नागबन्धु की भविष्यवाणी थी!
पिता, हमें उनका विश्वास करना चाहिये।
मुझे कोई सन्देह नहीं कि यह होगा।
कृपया हिम्मत न हारें, महानुभाव।
निश्चय ही नहीं। इस बीच मैंने अपने मित्र बज्रपुरी के विक्रमसिंह को सन्देश भेजा है। हम दोनों सहपाठी थे। वह मुझसे मिलने आ सकता है।
उनसे मिलने पर आपका हौसला बढ़ जायेगा, पिता।

मैं चन्द्रपुरी के कामों में उलझ गया था, इसलिए उसके साथ सम्पर्क बनाये रखने का समय नहीं मिला।
मुझे विश्वास है कि वे आयेंगे और हमें उनसे कुछ मदद मिलेगी।
आदिवासी युवक नरेन्द्रदेव के लिए खाना लाते हैं। आमपुरुष तथा रवीन्द्रदेव अपने पिता से विदा लेते हैं।
कामचलाऊ मन्दिर में यज्ञ आरम्भ होने से पूर्व अनुष्ठान किये जा रहे हैं।
आदिवासी गरुड़ के बच्चों को कुण्ड में डालते हैं। लपटें ऊपर उठती हैं।
नागबन्धु के शिष्य उन्माद में मन्त्रोच्चारण आरम्भ करते हैं।

आदिवासी आमपुरुष और रवीन्द्रदेव को गुफा मन्दिर के निकट आते हुए देखते हैं। नागबन्धु के शिष्य उनका स्वागत करते हैं।

चन्द्रपुरी से कोई समाचार?
नहीं, किन्तु सरहद से चार युवकों को पकड़कर लाने में किसी तरह हमलोग सफल हो गये। उन्हें बलि के लिए तैयार किया जा रहा है।

महानुभाव, आपके पिता से सन्देश आया है। वे आपसे तुरन्त मिलना चाहते हैं।
उन्हें अवश्य ही वज्रपुरी से खबर आई होगी।

रवीन्द्र, तुम जाओ।
हाँ, यह अवश्य ही महत्वपूर्ण होगा।

गुफा मन्दिर से उन्हें जाते हुए आमपुरुष देखता है।

आह! तुम आ गये! वज्रपुरी के प्रधान मंत्री से मिलो। मैंने तुम्हें कहा था न, विक्रमसिंह मुझे याद करेगा।
क्रमशः

एक अद्‌भुत तथ्य

फूल जो भय पैदा करते हैं

वर्ष २००६ बाँस के पुष्पण का भी साक्षी है, जिसके विषय में यह विश्वास किया जाता है कि वह सौ वर्षों में एक बार खिलता है। बाँस के फूल उत्तरपूर्व के मिजोरम, मणिपुर, त्रिपुरा तथा असम राज्यों में खिले हुए हैं।

बाँस वास्तव में घास परिवार का वृक्ष माना जाता है। मोटा खोखला ६० वर्षों से भी अधिक समय तक बढ़ता रहता है और तब फूल खिलने का समय आता है। इसकी लगभग २० प्रकार की किस्में भारत में उगाई जाती हैं। इसके फू ल पीले, या बैंगनी या किरमिजी रंग के होते हैं।

फूल खिलने के बाद बीज बनना शुरू होता है। बीज बनने के बाद पिण्ड नीचे गिर पड़ता है। मानसून आने के बाद पौदों का पुनरुद्‌भवन होने लगता है। नये पौदों को पकने में करीब छः वर्ष लग जाते हैं और बाँस की नयी फसल तैयार होने में ८ से १० साल लग जाते हैं जबकि जीवन-चक्र की अवधि ५० से ६० वर्ष तक की होती है।

बाँस के फूलों से लोग क्यों भयभीत हो जाते हैं? जब बाँस के सारे गुच्छे एक ही साथ फूल देने लगते हैं, तो भारी मात्रा में बीज पैदा हो जाते हैं। बाँस के बीज कृन्तकों के प्रिय भोजन हैं। जब बीज कम पड़ जाते हैं तब चूहे खेतों और अन्न के भण्डारों पर आक्रमण कर देते हैं जिससे अनाज की कमी हो जाती है और अकाल की स्थिति पैदा हो जाती है। आम धारणा यह है कि बाँस के फूल अकाल के कारण हैं।

केन्द्रीय सरकार ने इस वर्ष बाँस की कटाई, बाँस उत्पादन के क्षेत्रों के पुनरुद्धार तथा कृन्तक नियन्त्रण के लिए कदम उठाये हैं। निस्सन्देह, कुछ वैज्ञानिकों का मानना है कि अकाल केवल संयोग है।

आप के पन्ने आप के पन्ने

तुम्हारे लिए विज्ञान

एण्टर द ड्रैगन

तुमने परी कथा की पुस्तकों में आग्नेय उच्छवास वाले ड्रैगनों के बारे में अवश्य पढ़ा होगा।

कोमोडो ड्रैगन हिन्देशिया के कोमोडो द्वीपों में निवास करते हैं। वे एक-दो अन्य हिन्देशियाई द्वीपों में भी अल्प संख्या में पाये जाते हैं। लगभग १०,००० वर्ष पूर्व, मेगालानिया नाम का, इससे मिलता जुलता प्राणी आस्ट्रेलिया में पाया गया। कोमोडो की खोज प्रथम महायुद्ध के दौरान एक बिमान चालक के द्वारा की गई। ड्रैगन्स विशालकाय प्राणी होते हैं जिनकी जीभें काँटेदार होती हैं और जो हर समय बाहर-भीतर होती रहती हैं। उनकी पूँछें इतनी शक्तिशाली होती हैं कि उनके प्रहार से शत्रु मौत के घाट उतर जाये। कोमोडो के मुँह के जीवाणुओं से जख्मों में पीव पड़ जाते हैं, जिससे जख्म ठीक नहीं होते और उनके प्रहार के शिकार कुछ दिनों में मर जाते हैं।

ड्रैगन्स बहुत अच्छे तैराक होते हैं। स्थानीय भाषा में यद्यपि उन्हें ''ओरा'' कहा जाता है, पर प्रायः ही उन्हें वाटर क्रोकोडायल्स के नाम से जाना जाता है। वे विश्व के प्राचीनतम जीवित छिपकली परिवार मोनिटर से सम्बन्धित माने जाते हैं। वास्तव में वे विश्व भर में विशालतम छिपकली हैं।
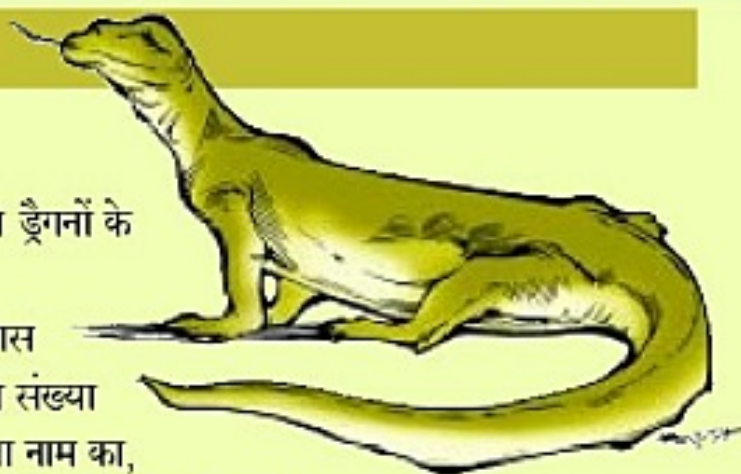
तुम्हारा प्रतिवेश

न्यायोचित व्यापार

प्राचीन यूनान के कारथेज नगर के निवासी अपने न्यायोचित व्यापार के लिए प्रसिद्ध थे। बिख्यात इतिहासकार हिरोडोटस के अनुसार कारथेजवासी किसी बन्दरगाह पर लंगर डाल कर समुद्र-तट पर अपना माल रख देते थे। तब वे अपने पोत में लौटकर एक विशाल धूम्र संकेत देते थे। ये धूम्र इतने ऊँचे उठते थे कि मीलों दूर गाँवों से दिखाई पड़ते थे।

यह इस बात का संकेत होता था कि लोग समुद्र तट पर आकर माल देख लें। ग्रामवासी माल को जितने मूल्य के लायक समझते उतना सोना रख जाते और दूर से छिपकर देखते। कारथेज वासी तब पोत से बाहर आकर इसका निर्णय करते कि उन्हें माल के बदले उचित मूल्य मिला है कि नहीं। यदि उन्हें लगता कि उन्हें उचित मूल्य नहीं मिला है तब वे पोत में लौट जाते और इन्तजार करते।

क्या तुम जानते थे?

मत्स्य–वाद्य

यह सच है कि गाने की हमलोगों की परिभाषा के अनुसार मछली गाना नहीं गा सकती। जो भी हो, ऐसा पाया गया है कि कुछ मछलियाँ संगीत का स्वर निकालने में सक्षम हैं।

कहते हैं, सायरन मछली (जो भूमध्यसागरीय क्षेत्र में पाई जाती है) अपने दाँतों को पीसकर संगीत की आवाज निकालती है।

ड्रम मछली का ऐसा नाम ड्रम की आवाज निकालने के कारण ही पड़ गया है। यह आवाज इतनी ऊँची होती है कि सतह से ५० फुट ऊँचाई तक मछुआरे इसे सुन सकते हैं।

अपने भारत को जानो

जर्मनी में विश्व कप फुटबाल प्रतियोगिता हो रही है। फुटबॉल में भारत की उपलब्धियाँ क्या हैं?

१. जब हमने एशियाई फुटबॉल में स्वर्ण पदक जीता तब भारतीय टीम के कप्तान कौन थे?

२. भारत ने केवल एक अन्तर्राष्ट्रीय फुटबॉल टोर्नामेंट आयोजित किया। नाम बताओ।

३. राष्ट्रीय फुटबॉल चैम्पियनशीप में विजेता तथा दो उपविजेताओं को क्या-क्या ट्राफिज़ दिये जाते हैं?

४. सबसे पुराना फुटबॉल टोर्नामेंट कौन-सा है?

५. डी सी एम फुटबॉल टोर्नामेंट पहली बार कब आयोजित किया गया?

(उत्तर ६६ पृष्ठ पर)

चित्र कैप्शन प्रतियोगिता

क्या तुम कुछ शब्दों में ऐसा चित्र परिचय बना सकते हो, जो एक दूसरे से संबंधित चित्रों के अनुकूल हो?

TATA NARAYANAMURTHY

TATA NARAYANAMURTHY

चित्र परिचय प्रतियोगिता, चन्दामामा,

प्लाट नं. ८२ (पु.न. ९२), डिफेन्स आफिसर्स कालोनी, इकाडुथांगल, चेन्नई -६०० ०९७.

जो हमारे पास इस माह की २० तारीख तक पहुँच जाए । सर्वश्रेष्ठ चित्र परिचय पर १००/- रुपये का पुरस्कार दिया जाएगा, जिसका प्रकाशन अगले अंक के बाद के अंक में किया जाएगा ।

बधाइयाँ

शिखा जैन
१९, अबुल फ़ज़ल रोड
बंगाली मार्केट,
नई दिल्ली-११०००१

विजयी प्रविष्टि

खेल के सिवा काम नहीं दूजा ।
सब कुछ छोड़ मैं करूँ पूजा ।।

अपने भारत को जानो प्रश्नोत्तरी के उत्तर:

१. १९५१ में- सैलेन मन्ना, १९६२ में - चुन्नी गोस्वामी
२. नेहरू गोल्ड कप- आरम्भ १९८२ में। कोलकता में खेला गया।
३. विजेता-सन्तोष ट्राफी प्रथम उपविजेता- कमलागुप्ता ट्राफी तृतीय उपविजेता- सम्पांगी ट्राफी।
४. डुरण्ड कप- सन १८८८ में सर मोर्टिमर डुरण्ड द्वारा आरम्भ किया गया।
५. सन् १९४५ में।

Printed and Published by B. Viswanatha Reddi at B.N.K. Press Pvt. Ltd., Chennai - 26 on behalf of Chandamama India Limited, No. 82, Defence Officers Colony, Ekkatuthangal, Chennai - 600 097. Editor: B. Viswanatha Reddi (Viswam)

CHANDAMAMA (Hindi) JULY 2006
Regd. with Registrar of Newspaper for India No. 1087/57. Regd No. TN/CC(S)Dn/163/06-08
Licensed to post WPP - Inland No.TN/CC(S)Dn/92/06-08, Foreign No. 93/06-08